स्वैच्छिक संस्थाओं में संगठनात्मक विकास: अवधारणा, आवश्यकता एवं स्वरूप

डा० राजेश टंडन

CB 4:7,2
TAN
8179

सहभागी शिक्षण केन्द्र
लखनऊ

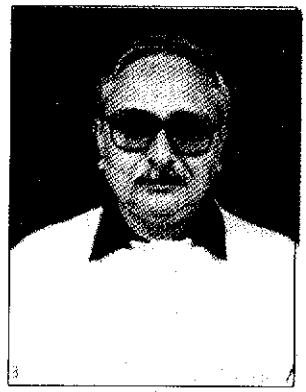

डा० राजेश टंडन

लेखक परिचय

डा० राजेश टंडन, नई दिल्ली स्थित *"प्रिया" (सोसायटी फॉर पार्टिसिपेटरी रिसर्च इन एशिया)* संस्था के कार्यकारी निदेशक हैं। डा० टंडन ने सहभागी अनुसंधान, प्रशिक्षण, मूल्यांकन, परामर्श आदि क्षेत्रों में भारत सहित अन्य विकासशील देशों की स्वैच्छिक संस्थाओं व विकास में संलग्न अन्य कर्ताओं को महत्वपूर्ण सहयोग, परामर्श एवं मार्गदर्शन प्रदान किया है। डा० टंडन वर्ष 1991-1996 तक *"वाणी" (वॉलेन्टरी एक्शन नेटवर्क इण्डिया)* के अध्यक्ष रहे हैं। आप वर्तमान में *एशियन साउथ पैसेफिक ब्यूरो आफ एडल्ट एजुकेशन* के भी अध्यक्ष हैं। डा० टंडन *सिविकस : वर्ल्ड एलांइस फॉर सिटिजन्स पार्टिसिपेशन* के संस्थापक बोर्ड मेम्बर हैं तथा वर्ष 1997 की बुडापेस्ट जनरल एसेम्बली में डा० राजेश टंडन को "सिविकस" का चेयरपर्सन मनोनीत किया गया है।

डा० टंडन ने सहभागी अनुसंधान, सहभागी प्रशिक्षण, स्वैच्छिक संस्था प्रबंधन, विकास में स्वैच्छिक संस्थाओं की भूमिका, नागरिक समाज आदि कई महत्वपूर्ण विषयों पर गहन कार्य किया है। इन विषयों पर उनके अनुभवों का प्रकाशन कई महत्वपूर्ण लेखों, मैनुअल्स, पुस्तकों आदि के रूप में उपलब्ध है।

स्वैच्छिक संस्थाओं में संगठनात्मक विकास : अवधारणा, आवश्यकता एवं स्वरूप

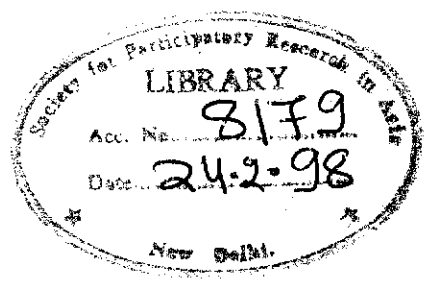

Society for Participatory Research in Asia
LIBRARY
Acc. No. 8179
Date 24-2-98
New Delhi.

लेखक : डा० राजेश टंडन
कार्यकारी निदेशक, प्रिया,
42, तुगलकाबाद इंस्टीट्यूशनल एरिया, नई दिल्ली - 110 062.

CB417.2
TAN
8179 TA

सहभागी शिक्षण केन्द्र
4/487, विवेक खण्ड, गोमती नगर, लखनऊ - 226 010
फोन : 0522-393559 फैक्स : 0522-397491
ई-मेल : ssk.lko@smy.sprintrpg.ems.vsnl.net.in

प्रथम संस्करण : नवम्बर 1997

सहभागी शिक्षण केन्द्र लखनऊ द्वारा सीमित वितरण हेतु प्रकाशित
एवं अनुज प्रिन्टर्स, लखनऊ द्वारा मुद्रित।

प्रस्तावना

गत दशक में स्वैच्छिक संगठनों की उपस्थिति, उनकी कार्य प्रणालियां, उनकी अवधारणायें, स्वरूप, पहचान, आदि कई महत्वपूर्ण मुद्दे राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर सरकार, बाजार व नागरिक समाज में चर्चा के केन्द्र बिन्दु रहे है और इस दिशा में चर्चा अभी भी जारी है। मुख्य रूप से संस्थाओं की बढ़ती पहचान, उपलब्ध संसाधन, चुनौतियों तथा आकार-प्रकार में हो रहे बदलावों के चलते आज हर स्तर पर संगठनात्मक विकास/संस्थागत विकास की बात की जा रही है और इसकी आवश्यकता महसूस की जा रही है। इसके चलते स्वैच्छिक संस्थाओं में किसी भी प्रकार के बदलावों को संस्थागत विकास का नाम दिया जाता है जबकि कई उदाहरणों को देखते हुये यह स्पष्ट हुआ है कि इन प्रयासों का संगठनात्मक विकास से दूर का भी रिश्ता नही है। यहां पर हम इन प्रयासों की आलोचना नही कर रहे बल्कि संगठनात्मक विकास के स्वरूप को समझने की आवश्यकता पर बल दे रहे हैं। क्योंकि संगठनात्मक विकास एक नियोजित प्रक्रिया है जिसे एक सीमित समय तथा निश्चित क्रम में पूरा किया जाना आवश्यक है। ये विषय स्वैच्छिक क्षेत्र में नया है। इस दिशा में सीमित प्रयास किये गये है, इसलिए इस विषय पर जानकारी भी सीमित है। लेकिन आज की परिस्थितियों के अनुरूप स्वैच्छिक संस्थाओं के लिए यह एक महत्वपूर्ण मुद्दा है और संस्थाओं की आवश्यकता बनती जा रही है। इसी उद्देश्य से इस विषय पर पूर्ण जानकारी उपलब्ध करने हेतु केन्द्र द्वारा डा. राजेश टण्डन जो कि पिछले दो दशकों से राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर संगठनात्मक विकास के प्रयासों से जुड़े हैं, के अनुभवों एवं विचारों को प्रकाशित किया जा रहा है। इस लेख में मूलतः संगठनात्मक विकास के आशय, संगठनात्मक विकास का इतिहास, इसका

स्वरूप, इसकी आवश्यकता, संगठनात्मक विकास के चरणों, तरीकों तथा इससे जुड़े अन्य मुद्दों पर विस्तार से चर्चा की गई है। मूल रूप से यह लेख अंग्रेजी भाषा में लिखा गया है।

विषय की गंभीरता एवं आवश्यकता को महसूस करते हुए इसे सरल एवं हिन्दी भाषा में केन्द्र के सदस्य डा० हरीश वशिष्ठ द्वारा तैयार किया गया है। आशा है यह पुस्तिका संगठनात्मक विकास के विभिन्न पहलुओं को समझने में मददगार तथा संगठनात्मक विकास के प्रयासों को क्रियान्वित करने में सहायक सिद्ध होगी।

- *अशोक भाई*
सहभागी शिक्षण केन्द्र

1 स्वैच्छिक संस्थाओं में संगठनात्मक विकास: अवधारणा, आवश्यकता एवं स्वरूप

पिछले मात्र पांच वर्षो या उससे कुछ अधिक पहले गैर सरकारी संगठनों में संगठनात्मक सुदृढ़ता (Institutional Strengthening), संस्थागत विकास (Institutional Development) या संगठनात्मक विकास (Organizational Development) पर विचार-विमर्श तथा अभ्यास प्रारम्भ किया गया। जैसे-जैसे गैर सरकारी संगठन संगठनात्मक विकास के अनुभवों से अवगत होते जायेगें, इस संबंध में अधिकाधिक जानकारी उपलब्ध होती जायेगी। हालांकि वर्तमान संदर्भ में गैर सरकारी संगठनों तथा उनके दाताओं की संगठनात्मक विकास के विषय में बढ़ती हुई मांग को ध्यान में रखते हुए यह आवश्यक हो गया है कि गैर सरकारी संगठनों में संगठनात्मक विकास के उपयोग तथा प्रासंगिकता के संबंधों तथा तात्पर्य (आशय) का स्पष्टीकरण किया जाय। इसलिये इस लेख के द्वारा गैर सरकारी संगठनों में उपरोक्त संदर्भ में संगठनात्मक विकास पर विचार करते हुए गैर सरकारी संगठनों में संगठनात्मक विकास की विशिष्टताओं पर समझ विकसित करने का प्रयास किया गया है। इसमें गैर सरकारी विकास संगठनों में संगठनात्मक विकास की वर्तमान विधियों तथा दिशाओं, भविष्य में उठने वालों कुछेक महत्वपूर्ण प्रश्नों को उठाते हुए संगठनात्मक विकास के विभिन्न पहलुओं पर प्रकाश डाला गया है।

पिछले दशक में विकास के क्षेत्र में अलाभकारी गैर सरकारी संस्थानों (एन.जी. ओज.) ने काफी महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त किया है। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद जब आधुनिक विकास प्रक्रियायें शुरू हुई, उस समय विकासशील एवं विकसित देशों में

इस कार्य के लिये सरकार ही मुख्य रूप से जिम्मेदार थी। ग्रामीण विकास, जल एवं स्वच्छता, शिक्षा एवं स्वास्थ्य, पर्यावरण एवं वन, कृषि तथा रोजगार, आदिवासी एवं महिलायें आदि समस्याओं से निपटने के लिये मुख्यतः सरकारी मंत्रालयों, विभागों तथा एजेन्सियों का ही उत्तरदायित्व माना जाता था। स्थानीय स्वैच्छिक संस्थायें, सामुदायिक एसोसियेशन्स तथा छोटी-छोटी स्थानीय विकास संस्थायें उस समय भी थीं, लेकिन वे संस्थायें अधिकांशतः प्रत्यक्ष न होकर मात्र हाशिये पर ही थीं। दक्षिण के देशों में विकास हेतु अंतर्राष्ट्रीय सहायता में वृद्धि के परिणामस्वरूप उत्तरी क्षेत्र के गैर सरकारी संगठनों ने (जोकि यूरोप तथा उत्तरी अमेरिका में स्थित थे) ने 1960 के अंतिम चरण में दक्षिणी क्षेत्र में किये जा रहे विकास कार्यक्रमों में अधिक सक्रिय रूप से भाग लेना प्रारम्भ किया। स्वैच्छिक विकास संगठनों (वी.डी.ओज) अथवा गैर सरकारी संगठनों जैसा कि उन्हें सामान्यतया कहा जाता है, ने 1970 के मध्य से, दक्षिणी क्षेत्र स्थित देशों में अंतर्राष्ट्रीय दाता संगठनों तथा राष्ट्रीय सरकारों का ध्यान, अपनी ओर आकर्षित करना प्रारम्भ कर दिया। बड़े पैमाने पर, अक्षम, ऊपर से नीचे की ओर, कभी-कभी, भ्रष्ट, सरकारी नौकरशाहियों की तुलना में गैर सरकारी संगठन अपेक्षाकृत छोटे, स्थानीय रूप से सुदृढ़ होते हैं। स्थानीय समुदायों से उनका अच्छा तालमेल रहता है। वे लचीले तथा गतिशील होने के साथ साथ उनका विकासात्मक प्रयास कहीं अधिक प्रभावशाली होता है।

स्वैच्छिक संस्थाओं की यह पहचान धीरे-धीरे उत्तर तथा दक्षिण के देशों में फैलने लगी तथा स्वैच्छिक संस्थाओं की कार्य कुशलता को स्वीकारा जाने लगा, जिसके फलस्वरूप द्विपक्षीय तथा बहुपक्षीय सहायता राशि में बढ़ोत्तरी हुयी। उत्तरी क्षेत्र के संगठनों द्वारा सहायता राशि में बढ़ोत्तरी के कारण राष्ट्रीय एवं प्रदेश सरकारों के कार्यक्रमों में भी अपेक्षाकृत वृद्धि हुयी है।

इसके साथ ही दक्षिण के गैर सरकारी संगठनों ने विभिन्न प्रकार की भूमिकाओं तथा कार्यक्रमों को विकसित करना प्रारम्भ कर दिया है। विभिन्न प्रकार के वर्गीकरण इन्हें अलग-अलग तरीके से वर्गीकृत करती है। कई गैर सरकारी संगठन समाज के निम्नतम स्तर पर कार्य करते हैं, जबकि कुछेक शोध क्षेत्र, प्रशिक्षण क्षेत्र, सूचनातंत्र क्षेत्र आदि में प्रचार-प्रसार कार्य में कार्यरत है। कुछ गैर सरकारी संगठनों ने अपने

कार्यों को विशिष्ट (स्वास्थ्य, शिक्षा, पेयजल, वानिकी, महिलाओं आदि) क्षेत्रों में विशेषज्ञता अर्जित की है जबकि कुछ अन्य समेकित तथा बहु-आयामी कार्यक्रमों के क्रियान्वयन में लगे हैं। कुछ गैर सरकारी संगठन सहायता (राहत) तथा कल्याणकारी सेवायें उपलब्ध कराते हैं, तो अन्य संगठन, संगठन निर्माण तथा उन्हें शशक्त करने के लिये कार्य करते हैं। कुछ संगठन छोटे-छोटे है, अनौपचारिक समूहों के रूप में है, जबकि कुछ बड़े विकास संगठनों के रूप में हैं।

80 के दशक के अन्तिम भाग में स्वैच्छिक संस्थाओं के सन्दर्भ में ''नागरिक समाज'' पर काफी बहस एवं चर्चा हुयी तथा स्वैच्छिक संस्थाओं को व्यापक परिवेश में देखा जाने लगा, तथा यह स्वीकार किया जाने लगा कि स्वैच्छिक संस्थायें भी नागरिक समाज का एक भांग है। स्वैच्छिक संस्थाओं के साथ-साथ लोक समूहों, अन्य गैर व्यापारिक संगठनों जैसे यूनियन, परिषदें आदि, को भी नागरिक समाज का उपघटक माना जाने लगा।

इस संदर्भ में 1990 के प्रारम्भ में संसाधनों की उपलब्धता, कार्यों में निपुणता, प्रभाव एवं परिणाम स्वैच्छिक संस्थाओं के सन्दर्भ में चर्चा के विषय रहे है। तथा इस दौरान स्वैच्छिक संस्थाओं की क्षमतावृद्धि की आवश्यकता को महत्व दिया जाने लगा, ताकि वे अपना कार्य प्रभावी रूप से कर सकें। बढ़ते हुये संसाधनों के साथ-साथ स्वैच्छिक संस्थाओं से बेहतर व प्रभावी परिणामों की भी अपेक्षा की जाने लगी, इसके साथ ही यह मान्यता भी बनती गयी कि यदि स्वैच्छिक संस्थाओं के कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षण देकर उनकी क्षमतावृद्धि की जाय तो ज्यादा प्रभावी परिणाम प्राप्त हो सकते हैं। लेकिन अधिकांशतः कार्यकर्ताओं की यह क्षमतावृद्धि तकनीकी पक्षों तक ही सीमित थी।

धीरे-धीरे यह विचार तकनीकी क्षेत्रों से हटकर संस्था के अन्य पक्षों में देखा जाने लगा। संस्था को दक्ष, निपुण व प्रभावी बनाने के लिए आवश्यक प्रयासों की आवश्यकता की पहचान की जाने लगी। कार्यकर्ताओं के साथ-साथ संपूर्ण संस्था की क्षमतावृद्धि के सन्दर्भ में सोचा जाने लगा। लगभग पिछले पांच वर्षों में ही गैर सरकारी संगठनों में संस्थागत सुदृढ़ता (Institutional Strengthening), संस्थागत

विकास (Institutional Development) अथवा संगठनात्मक विकास (Organisational Development) आदि पर विचार-विमर्श तथा अभ्यास एवं प्रयोगात्मक कार्य किया गया है। जैसे जैसे अधिक से अधिक गैर सरकारी संगठन, संगठनात्मक विकास का ज्ञान प्राप्त करेंगे या संगठनात्मक विकास के अनुभवों की जानकारी प्राप्त करेंगे, ठीक उसी प्रकार से जानकारी व ज्ञान का बृहत् भंडार, उनके उपयोग हेतु उनके पास उपलब्ध होगा। फिर भी गैर सरकारी संगठनों एवं उनके दाताओं की संगठनात्मक विकास संबंधी मांगों की वर्तमान समय में वृद्धि के कारण, यह आवश्यक हो गया है कि गैर सरकारी संगठनों (एन.जी.ओज.) में संगठनात्मक विकास के संबंध व उसके उपयोग एवं महत्व को स्पष्ट किया जाय। इस लेख में इसी उद्देश्य से गैर सरकारी संगठनों में संगठनात्मक विकास के विषय में उपरोक्त संदर्भ में विचार-विमर्श, ऐतिहासिक रूप से उसका सिंहावलोकन तथा गैर सरकारी संगठनों में संगठनात्मक विकास की विशिष्टताओं को उजागर करने का प्रयास किया गया है। इसमें गैर सरकारी संगठनों में संगठनात्मक विकास से संबंधित वर्तमान स्वरूप एवं भविष्य के महत्वपूर्ण प्रश्नों को उठाने का भी प्रयास किया गया है।

संगठनात्मक विकास का इतिहास

प्रबंधन विज्ञान में संगठनात्मक विकास (ओडी) के सिद्धान्त तथा प्रयोगात्मक तरीकों का उपयोग लगभग चार दशक पूर्व प्रयोगशाला प्रशिक्षण विधियों के अभ्यास द्वारा किया गया। यह प्रयास मुख्य रूप से राष्ट्रीय प्रशिक्षण प्रयोगशाला (रा. प्र. प्र. - एनटीएल), प्रायोगिक व्यावहारिक विज्ञान संस्थान (इंस्टीट्यूट फॉर एप्लाइड बिहेवोरियल साइंस) संयुक्त राज्य अमेरिका में 1950 के प्रारम्भ में लागू किया जा चुका था।

बड़े आकार के संगठनों के क्रियाकलापों में आवश्यक सुधार लाने तथा संगठनों में उत्पन्न हो रही मानवीय समस्याओं को सुलझाने की दृष्टि से कई तरह के प्रयास प्रारंभ किये गये। इस संबंध में सैन्य संगठनों में बड़े पैमाने पर उत्पन्न हो रही मानवीय समस्याओं (विशेष रूप से द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात शांतिकाल में सेना तथा

उसके आदमियों की भूमिका से निपटने के लिये) से निपटने के लिये काफी प्रारम्भिक अभ्यास किया जा चुका था। उपयोगों और सरकारों द्वारा महसूस की जा रही जीवन्त संगठनात्मक समस्याओं को सुलझाने के लिये संगठनात्मक विकास को बढ़ती हुई आवश्यकता के अनुसार लगातार परिभाषित किया जा रहा है। जैसे-जैसे जटिल संगठनों की प्रकृति तथा गतिविधियों के बारे में समझ बढ़ती जायेगी, संगठनात्मक विकास (ओ.डी.) का क्षेत्र तथा इसकी गहराई और क्रियान्वयन के क्षेत्रों का भी विस्तार होता जायेगा। हालांकि इस विषय में कई विभिन्न प्रकार की परिभाषायें तथा आधारभूत मान्यताओं को अपनाया गया है, लेकिन संगठनात्मक विकास के कुछेक प्रमुख व महत्वपूर्ण घटक कई व्यावहारिक प्रयासों से उभर कर सामने आये हैं। इन महत्वपूर्ण घटको को निम्नवत समझा जा सकता है।

1. नियोजित परिवर्तन

संगठनात्मक विकास में परिवर्तन की आवश्यकता को पहचानना तथा महसूस करना आवश्यक है तथा इस आवश्यकता के आधार पर संस्था के कुछ क्षेत्रों या सब में, कार्यक्रमों या गतिविधियों आदि में नियोजित बदलाव हेतु परिवर्तन की आवश्यकता महसूस करना एक महत्वपूर्ण पक्ष है। इस सन्दर्भ में संगठनात्मक विकास का महत्व संस्था को अपने भवष्यि में झांकने तथा भविष्य के लिए एक नियोजित परिवर्तन का प्रयास है। इसके विपरीत तात्काकालिक प्रभावों से निपटने हेतु आनन-फानन में उठाये गये कदम तदर्थ (एडोक) तथा प्रतिक्रियात्मक होते हैं। अतः यहाँ यह समझना आवश्यक है कि भविष्य के लिए नियोजित परिवर्तनों की योजना बनाना संगठनात्मक विकास की प्रक्रिया का एक आवश्यक अंग है।

2. उन्नत प्रभावशीलता

संगठनात्मक विकास का उद्देश्य किसी भी संगठन की दीर्घकालीन प्रभावशीलता को और अधिक बेहतर करना है। अल्पकालीन लाभ, लागत व परिणाम प्राप्त करने में दक्षता तथा वृद्धि भी संगठनात्मक विकास के लक्ष्यों का एक भाग है। किसी भी संगठन के हालातों में सुधार तथा नियोजित परिवर्तन में लगने की उसकी क्षमता की

वृद्धि एवं स्वयं से अपने में बदलाव लाने की क्षमता उन्नत प्रभावशीलता उद्देश्य का एक भाग है।

एक ओर नई तकनीकी, नये कार्य, नई सेवायें, नये संसाधन, नये लक्ष्य समूह आदि को प्राप्त करना तथा दूसरी ओर कर्मचारियों के मनोबल तथा उत्पादकता में वृद्धि, लागत में कमी, गुणवत्ता का विकास, प्रतिद्वन्द्विता में वृद्धि आदि, किसी भी संगठन की प्रभावशीलता में सुधार आदि इस आधारभूत ढाँचे का ही भाग है।

3. बुनियादी मान्यतायें

संगठनात्मक विकास के प्रयासों ने व्यक्तियों, संगठनों तथा समाज के सन्दर्भ में कुछ मूलभूत मान्यताओं को ग्रहण करने की आवश्यकता पर बल दिया है। मानवीय आवश्यकताओं, प्रेरणाओं, सामाजिक संबंधों तथा सामूहिकता की भावना के आधार पर संगठनात्मक विकास व्यक्तिगत स्वतंत्रता, संस्था की आवश्यकता के अनुरूप विकल्पों एवं प्रयासों के चयन की स्वतंत्रता, निरंतर रचनात्मकता तथा अपनी आवश्यकता के अनुरूप स्वयं से व्यवस्थाओं, नियमों, विधियों आदि को विकसित करना एक आधारभूत मान्यता एवं मूल्य है। इस तरह से प्राप्त संगठनात्मक प्रभावशीलता संगठनात्मक विकास का एक आवश्यक व महत्वपूर्ण भाग है।

इसी प्रकार यह व्यक्तियों में जानकारियों का आदान-प्रदान, खुलापन, पारस्परिक विश्वास, अनौपचारिक संचार व वार्तालाप, पारस्परिक सहयोग, सामूहिक उत्तरदायित्व तथा संयुक्त रूप से समस्याओं के समाधान जोकि व्यक्तियों के समूह द्वारा किसी भी सामूहिक गतिविधियों का एक आवश्यक पहलू है, को प्रोत्साहित करता है। अंत में निष्कर्ष रूप में संगठनात्मक विकास (ओ.डी.) लचीलेपन की आवश्यकता, निरंतर परिवर्तन, कम श्रेणीबद्ध संगठनात्मक ढांचा, व्यवस्था तथा नियमों/प्रक्रियाओं आदि को संगठन की परिवर्तन से जूझने की क्षमता एवं रचनात्मकता में वृद्धि को प्रोत्साहित करता है। हालांकि मान्यताओं के इस रंग पटल के विशिष्ट घटकों में भिन्नता हो सकती है, परन्तु संगठनात्मक विकास के कार्यकर्ताओं ने सामान्य रूप से यह स्वीकार किया है कि संगठनात्मक विकास के लिए कुछ मूलभूत मान्यताओं को संगठनात्मक विकास के प्रयासों द्वारा व्यवहार में लाया जा सकता है।

4. व्यवस्थित समझदारी

संगठनात्मक विकास संस्थाओं में उठने वाली समस्याओं, उनके कारणों तथा उन समस्याओं के स्वरूप एवं प्रभाव को गंभीरता से समझने की आवश्यकता पर जोर देता है। अतः संगठनात्मक विकास की प्रक्रिया इन समस्याओं की खोजबीन/जांच से प्रारंभ होती है, जिसका उद्देश्य संगठन की व्यापक व विस्तृत समझदारी विकसित करना है। खोजबीन की यह प्रक्रिया कई बार संगठनात्मक विकास को आंकड़ा आधारित बना देती है। जो अपना आधार संस्थागत संशोधनों के प्रयास तथा समस्याओं को दूर करने की व्यवस्था के विश्लेषणों से ज्ञात परिणामों के आधार पर करती है। इस तरह की खोजबीन के लिए संस्था में एक व्यवस्थित समझदारी तथा नियोजित फ्रेमवर्क (व्यवस्था) की आवश्यकता होती है। संगठनात्मक व्यवहार के अब भली-भांति स्थापित प्रबंधन तंत्र में पिछले कुछेक वर्षों में संगठन के अनेकों विभिन्न प्रकार की आधारभूत संरचनाओं का विकास किया गया है। इसलिये, संगठनात्मक विकास के लिये एक स्पष्ट तथा सुनिश्चित रूप से निर्मित आधारभूत संरचना, जिससे ज्ञात हो कि संगठन है क्या? यह अपना कार्य किस प्रकार करता है, किन व किस प्रकार के कार्यक्रमों से किस प्रकार का परिणाम उपलब्ध होगा क्या विकल्प हो सकते हैं, आदि-आदि जानना संगठनात्मक विकास की आवश्यक शर्त है।

5. सीखने की प्रक्रिया

संगठनों में परिवर्तन तथा सुधारों को कार्यान्वित करने के लिये अनेक प्रकार के उपाय हैं। बड़े संगठनों में सामान्यतः शक्ति तथा दबाव (आदेशों तथा निर्णयों) के द्वारा वांछित परिवर्तनों को प्रभावी बनाया जाता है। अतः संगठनात्मक विकास के द्वारा किसी भी संगठन में परिवर्तन की प्रक्रिया, वास्तव में एक क्रियात्मक-शोध (एक्शन-रिसर्च) विधि के अनुसरण के द्वारा ही क्रियान्वित होती है। पूछ-ताँछ, सीखना, प्रयोग करना, शिक्षा तथा सतत् प्रयास करना ही संगठनात्मक विकास के संगठनों में लाये जाने वाले परिवर्तनों के प्रचलित तरीके हैं। अतः संगठनात्मक विकास की प्रक्रिया आरम्भ से ही इस प्रकार निर्धारित की जाती है कि संगठन, उसका

8179
24.2.98
Society for Participatory Research LIBRARY N. Delhi

नेतृत्व तथा उसके सदस्य समस्याओं की खोजबीन तथा नियोजन एवं परिवर्तनों के कार्यान्वयन एवं बदलाव, जोकि इस आधार पर आवश्यक हों, में सक्रिय रूप से अपनी भागीदारी निभायें। इससे यह सुनिश्चित होगा कि संगठन में परिवर्तन ''स्वयं'' के द्वारा हो रहा है तथा इसके लगातार चलते रहने की भी संभावना है। इससे यह भी सुनिश्चित होगा कि संगठन का नेतृत्व तथा उसके सदस्यगण सीखने व पुनः सीखने की प्रक्रिया से गुजर रहे है ताकि वे इसकी आवश्यकता व परिवर्तन के दिशा-निर्देशों को भली-भांति समझ सकें जोकि संगठन को प्रभावी बनाने के लिए आवश्यक है।

संगठनात्मक विकास के उपरोक्त महत्वपूर्ण घटक किसी भी नियोजित संगठनात्मक सुधार के प्रयासों की नींव हैं। जैसा कि इससे स्पष्ट है कि संगठनात्मक विकास का प्रयोग या व्यावहारिक पहलू तथा सिद्धान्त कुछेक विशिष्ट प्रकार के संगठनों के अनुभवों द्वारा एक विशेष ऐतिहासिक संदर्भ में विकसित हुआ है। सामान्य रूप में यह संगठन लाभ कमाने वाले, विशाल वाणिज्यिक, औद्योगिक संगठन थे, जैसे - कारखाने, खदानें, कार्यालय, आदि। कभी-कभी इनमें बड़ी सरकारी एजेन्सियाँ, विभाग तथा सरकारी निगम आदि भी सम्मिलित हैं।

यह संगठन काफी बड़े थे, इनमें जटिल नौकरशाही व्यवस्था तथा सुपरिभाषित ढाँचे, भूमिकायें, नियम, व्यवस्था तथा प्रक्रियायें होती हैं। इनका उपयोग बहुधा उन स्थितियों में होता है जिनमें कच्चे माल की आपूर्ति, उत्पादन की प्रौद्योगिकी तथा उत्पादों के विक्रय की व्यवस्था स्थायी तथा सुनिश्चित होती हैं। बड़ी सरकारी एजेन्सियों या निगमों के कार्य संचालन में एकाधिकार की स्थिति होती है जिसमें संसाधनों की प्राप्ति निरन्तर गति से होती है। ऐसे कई संगठनों (लाभ कमाने वाले निगमों या सरकारी उपक्रमों के संबंध में) की रूपरेखा तथा संचालन पद्धति 19वीं शताब्दी में औद्योगिक क्रांति के समय विकसित किये गये सिद्धान्तों पर आधारित हैं।

वैज्ञानिक प्रबंधन के यह सिद्धान्त, संयोजन की अवस्था में दक्षता, नौकरशाही का संगठन में गैर सामन्तवादी रूप आदि का उद्भव औद्योगिक क्रांति के समय में प्रबंधकीय दक्षता तथा वास्तविकता में अधिक उत्पादन तथा सेवा संस्थानों के स्थापित

करने की संभावनाओं के लिये स्थान बनाना था। इसलिये, यह महत्वपूर्ण है कि संगठनात्मक विकास का प्रयोग मानव मूल्यों, संगठनात्मक लोकतंत्र, खुले तथा सहभागिता पर आधारित प्रबंधन तथा ''सीखने'' पर जोर दिया जाता है। संगठनात्मक विकास का अभ्यास तथा सिद्धान्त प्रयोग तथा नियोजित परिवर्तनों से संबंधित है क्योंकि अनेक औद्योगिक निगम अत्याधिक संवेदनशील परिवर्तन, अनिश्चितता तथा सामाजिक, राजनैतिक आर्थिक तथा प्रौद्योगिक पर्यावरण आदि संबंधित है। संगठनात्मक विकास का ऐसे संगठनों में हस्तक्षेप/दखल उनकी क्षमताओं के निर्माण तथा सक्रियता पूर्व निर्धारित भावी प्रयासों को लागू करना है।

स्वैच्छिक संस्थाओं के सन्दर्भ में संगठनात्मक विकास एक महत्वपूर्ण सीखने की प्रक्रिया है। संगठन अपने को प्रभावी बनाने के लिए नई जानकारियाँ प्राप्त कर अपने में आवश्यक सुधार या बदलाव ला सकता है। साथ ही यह हमें स्पष्ट रूप से संकेत देता है कि हम किस दिशा में बढ़ रहे हैं तथा हमें क्या और किस तरह प्रयास आगे बढ़ने के लिए करने चाहिए।

2 गैर सरकारी संगठनों में संगठनात्मक विकास की प्रासंगिकता

वास्तव में गैर सरकारी संगठनों से संगठनात्मक विकास का संबंध क्या है? उसका महत्व क्या है? जैसा कि पहले संदर्भ में स्पष्ट किया जा चुका है, कि गैर सरकारी संगठन विभिन्न क्रिया-कलापों वाले, विभिन्न आकार, प्रकार व प्रकृति वाले तथा भिन्न-भिन्न आशयों व पहुंच वाले कार्यकर्ताओं का एक समूह है। हालांकि इस प्रकार की परिस्थिति में इसके समाधान हेतु कोई विश्वव्यापी सर्वमान्य हल निकालना संभव नहीं है परन्तु फिर भी कुछेक गैर सरकारी संगठनों में कुछ निश्चित प्रकार के दबाव इस परिवर्तन के लिये उत्तरदायी होते हैं।

1. बाहरी दबाव

वर्तमान में गैर सरकारी संगठनों को प्रभावित करने के लिये अनेकों प्रकार के बाहरी दबाव परिवर्तन के लिये जिम्मेदार होते हैं :

क. स्वैच्छिक संस्थायें वास्तव में मिशन आधारित संगठन है, एक गैर सरकारी संगठन का लक्ष्य समुदाय या समाज में वांछित सामाजिक परिवर्तन की अवधारणा होती है। ऐसे वांछित परिवर्तनों में शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार, आदि से संबंधित परिवर्तनों का लक्ष्य होता है। सामाजिक परिवर्तन संगठनों के रूप में, गैर सरकारी संगठन में उनकी बाहरी क्षेत्रीयता के प्रभाव का भी झुकाव रहता है। यदि गैर सरकारी संगठन वांछित परिवर्तन लाने में सफल हो जाता है तो ऐसी अवस्था में वे अपने लक्ष्यों को दुबारा परिभाषित करने की इच्छा करने लगते हैं। गैर सरकारी संगठन द्वारा लक्ष्यों को प्राप्त करने का परिणाम सामाजिक परिवर्तन के रूप में होता है जोकि बाद में गैर सरकारी संगठन में स्वयं के परिवर्तन हेतु दबाव डालना प्रारम्भ करता है।

अपने निर्धारित लक्ष्य को प्राप्त करने में असफल होने पर गैर सरकारी संगठन

को अपनी रणनीति तथा लक्ष्य को पुनः परिभाषित करने का दबाव उत्पन्न होने लगता है। सामाजिक परिवर्तन वाले गैर सरकारी संगठन परिवर्तनों को आगे बढ़ाते हुए जीवित रहते हैं। अतः गैर सरकारी संगठनों के जीवन का, उनके अस्तित्व तथा प्रशावशीलता के लिये मूल आधार होता है। अतः गैर सरकारी संगठनों के नवीनीकरण तथा प्रभावी रूप से कार्य करने के लिये संगठनात्मक विकास उनकी निरंतरता के लिये आवश्यक है।

ख. गैर सरकारी संगठनों का प्रमुख कार्य बाहरी क्षेत्रों में अपेक्षित परिवर्तन को प्रभावी करना है। पारिभाषिक रूप में बाहरी क्षेत्र का अर्थ गैर सरकारी संगठनों के कार्यक्षेत्र तथा नियंत्रण के बाहर स्थित संगठनों से है। इसलिये उस क्षेत्र विशेष में होने वाले स्वायत्त परिवर्तन गैर सरकारी संगठन में परिवर्तन हेतु नवीन दबावों को प्रारम्भ कर देते हैं। इसलिये एक स्थानीय समुदाय सामाजिक, आर्थिक, या राजनैतिक परिवर्तनों से, बाहरी प्रभावों के कारण, उनके प्रभाव से गुजर सकता है। समुदाय के अन्य घटक अपने आप ही परिवर्तित हो सकते हैं। उदाहरणार्थ, आर्थिक उदारीकरण के फलस्वरूप समुदाय (समाज) का आर्थिक विकास प्रारम्भ हो जाता है, इसके कारण रोजगार, आय, गरीबी, पर्यावरणीय ह्रास, प्राकृतिक संसाधन के उपयोगों के प्रकारों आदि में महत्वपूर्ण परिवर्तन प्रारम्भ हो जाता है। इन समुदायों में कार्य करने वाली सरकारी एजेन्सियाँ भी अपनी नीतियों, कार्यक्रमों, नियम-कानूनों, तथा रणनीतियों आदि में अपने आप ही परिवर्तन करना प्रारम्भ कर देती है अथवा गैर सरकारी संगठनों के समुदाय को कार्य करने के लिये कम कार्यक्षेत्र छोड़ती हैं। आज के विश्व में बढ़ते हुए अंतर्राष्ट्रीयकरण की प्रक्रिया, समुदाय में परिवर्तन, बहुराष्ट्रीय निगमों और या अंतर्राष्ट्रीय, द्विपक्षीय अथवा बहुपक्षीय एजेन्सियों द्वारा उत्पन्न किये जा सकते हैं, और उस समुदाय विशेष में गैर सरकारी संगठनों की गतिविधियों के लिये वृद्धि का मार्ग प्रशस्त करते हैं।

यह स्वतंत्र और स्वायत्तशासी ताकतें उन बाहरी क्षेत्रों में ऐसे परिवर्तन उत्पन्न कर देती हैं जिनमें एक स्वैच्छिक संस्था अपना प्रमुख कार्य करती है (या अपना मुख्य विकास कार्य करती है)। यह परिवर्तन गैर सरकारी संगठनों में परिवर्तन

के लिये महत्वपूर्ण दबाव इस प्रकार उत्पन्न कर देते है कि जिनको संगठनात्मक विकास द्वारा ही कार्यरूप में व्यवहार में उतारा जा सकता है।

ग. अलाभकारी गैर सरकारी संगठन विकास व अपने नैतिक कार्यों के लिये लगातार बाहरी संसाधनों पर ही निर्भर रहते है। यह संसाधन सामान्यतया राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय दाताओं, जोकि विशिष्ट वांछित विकासात्मक प्रभावों को किसी समुदाय (या समाज) में परिवर्तन के रूप में देखने में दिलचस्पी रखते हैं जिनसे कि वह गैर सरकारी संगठन विशेष अपना कार्य करता है। संसाधन बाहरी क्षेत्रों के होते है तथा यह स्थानीय समुदाय क्षेत्र के बाहर के तथा दूर के होते हैं और इन स्थानीय समुदायों में यह गैर सरकारी संगठन अपना मुख्य कार्य करते हैं। प्रमुख परिवर्तनों तथा नीतिगत बदलावों एवं दाता संस्थाओं के कार्यक्रमों में परिवर्तन पिछले पांच दशकों में स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है क्योंकि इनका मुख्य कारण क्षेत्रीय कार्य के अनुभवों से प्राप्त नयी जानकारियाँ व तौर-तरीके हैं। जैसा कि गैर सरकारी संगठन भली-भांति जानते हैं कि दाता संस्थायें विभिन्न विकासात्मक समस्याओं के विभिन्न मुद्दों को समय पर करने पर बल देते हैं : जैसे ग्रामीण विकास, पर्यावरण, महिलाओं का स्तर, सूक्ष्म उद्मों, नगरीय गरीबी, आदि दाताओं की प्राथमिकताओं के कुछेक नीतिगत बदलाव हैं। अंतर्राष्ट्रीय दाताओं की उपलब्ध प्राथमिकताओं तथा संसाधनों की मात्रा प्राथमिकताओं, नीतियों, जनता की राय तथा बड़े पैमाने पर झुकावों/रूझानों, उनके अपने मेजबान देशों आदि के अनुसार परिवर्तित होती रहती है। उसके अनुसार दाताओं की नीतियों व प्राथमिकताओं में बदलाव महत्वपूर्ण ढंग से गैर सरकारी संगठनों की गतिविधियों को प्रभावित करता है, और इसी कारण गैर सरकारी संगठनों को अपने विकासात्मक ढांचे में परिवर्तन करने की आवश्यकता होती है, और संभवतः संगठनात्मक विकास इस दिशा में अपना योगदान कर सकता है।

घ. जैसे-जैसे गैर सरकारी संगठन समुदाय या समाज में कार्य करते हुए अपनी पहचान तथा महत्व प्राप्त करते जाते हैं, समाज में उनके संबंध व समाज को

उनसे आशायें विकसित होने लगती हैं। गैर सरकारी संगठन से उससे जुड़े लोग/समूह पारस्परिक सहयोग व खुलेपन की अपेक्षा करते हैं। संचार माध्यम (मीडिया) तथा जन साधारण गैर सरकारी संगठनों में और अधिक पारदर्शिता तथा उत्तरदायित्व की अपेक्षा करने लगते हैं। सरकारी एजेंसियाँ गैर सरकारी संगठनों के क्रियाकलापों पर और उनके प्रभावों पर और अधिक उत्तम आंकड़ों की अपेक्षा करते हैं ताकि गैर सरकारी संगठनों की गतिविधियों को नियंत्रित करने के लिये नीतियां तथा नियमों की रचना की जा सके। नागरिक समाज के अन्य सूत्रधार (यथा स्थानीय परिषदें, स्थानीय निकायों के संस्थान, सहकारी संस्थायें, मजदूर यूनियनें, विशैषज्ञ परिषदें, विद्वतपरिषदें, आदि आदि) भी गैर सरकारी संगठनों से सहयोग की आशा करने लगते है। इस प्रकार यह गैर सरकारी संगठन अपने आपको संबंधों के एक ऐसे जाल में अन्य स्वायत्तशासी घटकों तथा एजेन्सियों के साथ ऐसा जकड़ा हुआ पाते हैं जिनकी आशायें तथा मांगें गैर सरकारी संगठनों के लिये विरोधाभासी हो जाती हैं। इस तरह के विरोधाभासी दबाव जोकि बाहरी क्षेत्रों द्वारा उत्पन्न किये जाते हैं परिवर्तन के लिये गैर सरकारी संगठनों को बाध्य कर देते हैं। ऐसी दशा में केवल संगठनात्मक विकास ही एक गैर सरकारी संगठन को बचा सकती है व उन आशाओं तथा आकांक्षाओं को स्पष्ट कर सकती है।

2. आंतरिक दबाव

इसी प्रकार, गैर सरकारी संगठनों को परितर्वन के लिये अनेकों प्रकार के आंतरिक दबावों का भी सामना करना पड़ता है।

क. शुरुआती दौर में सामान्यतया एक गैर सरकारी संगठन, सीमित क्षेत्र तथा छोटे पैमाने पर संसाधनों की उपलब्धता से प्रारम्भ करना होता है। जैसे-जैसे यह अपने उद्देश्य में सफल होता जाता है वैसे-वैसे ही उसकी वृद्धि होती जाती है। गैर सरकारी संगठन अपने जीवन चक्र के क्रम में जन्म, बाल्यावस्था, युवावस्था तथा संभावित समाप्ति का अनुभव करते हैं। गैर सरकारी संगठनों में वृद्धि सामान्यतया कार्यक्षेत्र में वृद्धि, हस्तक्षेप के स्वरूपों में बदलाव,

अधिक कर्मचारी, आय-व्ययक (बजट) तथा बुनियादी ढांचे आदि के रूप में होती है। संगठनात्मक गतिविधियों के तौर तरीके जोकि छोटे तथा औपचारिक समूहों के लिये लागू होते है उतने बड़े गैर सरकारी संगठनों के लिये काफी नहीं होते हैं। वृद्धि के लिये परिवर्तन तो अवश्यमभावी है, और वह स्वयं में भी एक परिवर्तन ही है। सामान्यतया, गैर सरकारी संगठनों में विकास या वृद्धि की दर स्वयं में काफी तीव्र होती है परन्तु वह वृद्धि कुछ अंश तक अनियोजित होती है। संगठनात्मक विकास गैर सरकारी नियोजन एवं क्रियान्वयन तथा बदलती हुई परिस्थितियों के अनुरूप हस्तक्षेप करने का मार्ग प्रशस्त करता है।

ख. सामाजिक परिवर्तन के लक्ष्य को लेकर चलने वाले गैर सरकारी संगठन वास्तव में मूल्य आधारित होते हैं। गैर सरकारी संगठनों के कर्मचारी इनके मूल्यों के कारण तथा सामाजिक परिवर्तन की उनकी विचारधारा से आकर्षित होते हैं। गैर सरकारी संगठनों के मूल्य तथा आदर्श जोकि उनका आधार होते हैं, संगठन के क्रियाकलापों के कारण सामान्यतया झंझटों तथा तनावों से युक्त होते हैं। गैर सरकारी संगठन विभिन्न क्षेत्रों से संबंधित होते हैं तथा अपने विभिन्न मूल्यों पर जोर देते हैं। इन संगठनों में "साधनों तथा अंतिम लक्ष्यों" को लेकर एक लम्बी बहस तथा जंग इसी विवाद को लेकर छिड़ जाती है। जैसे-जैसे एक गैर सरकारी संगठन कार्यक्षेत्र में अनुभव प्राप्त करता जाता है वैसे-वैसे ही उसके कर्मचारी सामाजिक परिवर्तन से संबंधित अपने सिद्धान्तों तथा रणनीतियों का निरीक्षण करते जाते हैं। उदाहरण के लिये दक्षिण एशिया के गैर सरकारी संगठनों ने 1970 के अंतिम भाग में गैर सरकारी संगठनों द्वारा गरीबों तथा भूले-बिसरे लोगों के संगठन पर पूर्ण निष्ठा के साथ बल दिया। गरीब तथा भूले-बिसरे लोगों के उत्थान के लिये सामुदायिक सेवाओं, निवेशों के विकास तथा आर्थिक कार्यक्रमों की बढ़ती हुई आवश्यकतायें प्राथमिक रहीं। पूर्ववर्ती कर्मचारी जोकि कर्त्तव्य निष्ठा तथा संगठन-निर्माण के अनुभवी थे, स्वास्थ्य, शिक्षा तथा आय वृद्धि के क्षेत्रों में निपुण नये कर्मचारियों से संघर्ष की स्थिति में आ गये। इन गैर सरकारी संगठनों में चयनित आदर्शवाद, तनाव तथा बिखराव की एक मुख्य पृष्ठभूमि बन गई तथा गैर सरकारी संगठनों में इससे लकवे की सी स्थिति बन गई। इसी संदर्भ में संगठनात्मक

विकासीय प्रयास गैर सरकारी संगठनों के लिये नियोजित परिवर्तन में भी सहायक बन गये।

ग. अब चूंकि स्वैच्छिक संस्थायें गुजरते हुए समय के साथ-साथ अनुभव एवं पहचान प्राप्त करते जाते हैं परन्तु प्रभावी गतिविधियों तथा मापने योग्य परिणाम को प्राप्त करने का दबाव भीतर से ही उत्पन्न होता है। सामान्य रूप से गैर सरकारी संस्थानों में यह कुछ प्रमुख विषमतायें हैं जो कि गैर सरकारी संस्थानों के उद्देश्यों तथा उनकी गतिविधियों और परिणामों के सूचक हैं। प्रक्रिया आधारित विकासात्मक प्रयास जोकि बहुधा गैर सरकारी संस्थानों द्वारा प्राथमिकता के आधार पर स्वीकृत की जाती है, का मापन गैर सरकारी संस्थानों में कठिनाई से हो पाता है। परिणाम आधारित लक्ष्यों के मापने की प्रक्रिया सरल है परन्तु यह गैर सरकारी संस्थान के लिये उसके लक्ष्यों तथा योजनाओं के लिये एक अनिवार्य भाग नहीं है। स्पष्ट रूप से दिखने वाले परिणामों तथा प्रभावों की अपेक्षा संगठन में परिवर्तन के लिये आंतरिक दबाव उत्पन्न कर देता है। अतः किसी गैर सरकारी संस्थान में ऐसी स्थिति में संगठनात्मक विकास निश्चित रूप से प्रासंगिक हो जाता है।

घ. गैर सरकारी संस्थान सामान्यतः वास्तव में सामाजिक रूप से कटिबद्ध, आदर्शवादी, कल्पनाशील मनुष्यों का समूह होता है जोकि समाज पर अपनी कुछ छाप छोड़ना चाहते है। कुछ महत्वपूर्ण मामलों में यह व्यक्ति विशेष सामाजिक उद्यमी होते हैं, क्योंकि ये इन मामलों में पहल करते हैं तथा अपने मूल्यों, आदर्शों, क्षमताओं, ख्याति, तथा संसाधनों को जोखिम व दांव पर लगाते है तथा उनका पालन-पोषण करते हैं। व्यक्तिगत तौर पर अपने सिद्धान्तों, मूल्यों, शक्तियों, व्यक्तिगत शारीरिक तथा भावनात्मक संसाधनों को निर्देशित करके, और गैर सरकारी संस्थान के साथ-साथ वृद्धि गैर सरकारी संगठनों के संस्थापक तथा गैर सरकारी संगठन स्वयं ही समानान्तर जीवन-चक्र विकसित कर लेते हैं। गैर-सरकारी संगठन के साथ संस्थापक के संबंध आन्तरिक व बाहरी दोनों ही रूपों में पहचान के द्वारा मजबूत होते हैं। ऐसी स्थितियों में नेतृत्व में आन्तरिक संबंध, गैर सरकारी संगठन स्तर पर नेतृत्व का

निर्माण व प्रबंधन, गैर सरकारी संगठन की संस्थागत तकनीकी मजबूती, उसका प्रशासन, तथा उसकी गतिविधियों को औपचारिक रूप से सुव्यवस्थित करने की मांग हो सकती है चाहे संस्थापक सदस्यों की इसमें सोच भी न हो। इस प्रकार अनेकों गैर सरकारी संस्थान अपने आपको इन विषयों के संबंध में कठिन स्थिति में पाते हैं, जोकि परिवर्तन के लिये बहुत बड़ा दबाव उत्पन्न कर देते हैं। यहीं पर इस महत्वपूर्ण संदर्भ में संगठनात्मक विकास का अपना स्वयं का योगदान होता है।

परिवर्तन के इन्हीं बाहरी तथा आन्तरिक दबावों के कारण पुनःसंरचना की गैर सरकारी संगठनों में आवश्यकता की उत्पत्ति होती है और संगठनात्मक अस्तित्व पैदा होता है। गैर सरकारी संगठन परिवर्तन के इन दबावों के विरुद्ध भिन्न-भिन्न तरीकों से अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हैं। अधिकांश का झुकाव "धारा के साथ ही बहने जैसा होता है।" यह संगठन इन दबावों को लहरों के रूप में लेते हैं और अपनी दिशा स्वयं ही तय करने देते हैं। या फिर वे इन दबावों को पूर्णतः नकारते हुए "अपनी पूर्व निर्धारित कार्यप्रणाली पर ही कार्य करते हैं।" यह प्रेरणा, समय के साथ, अन्तिम रूप से उसी प्रेरणा की ओर झुकाव उत्पन्न करती है जिसमें यह प्रेरणा बाहरी दबाव को बाहरी मुद्दे के रूप में रखता है। केवल कुछेक मामलों में ही, गैर सरकारी संगठन अपने आप में बदलाव तथा परिवर्तन की आवश्यकता को पहचानते हैं। गैर सरकारी संगठन, सामाजिक परिवर्तन के संगठनों के रूप में दूसरों को परिवर्तित करने के लिये इस प्रकार व्यस्त हो जाते हैं कि वे सामान्यतया अपने भीतर स्वयं में होने वाले परिवर्तनों से जोकि उनमें हो भी चुके हैं (उदाहरण के लिए उनकी अपनी अभिवृद्धि) से पूर्णतः अनभिज्ञ रह जाते हैं, अथवा वे उन परिवर्तनों को (उदाहरण के लिये - ढाँचे में बदलाव) अमल में लाने के लिये समय ही नहीं निकाल पाते है।

ऐसी स्थितियों में भी जब कि गैर सरकारी संगठन, संगठन में वांछित परिवर्तनों के लिये तत्पर होते हैं, उनका झुकाव "तत्काल प्रभावशाली आंशिक तथा अस्थाई

स्थितियों" की ओर अधिक होता है। संगठनात्मक परिवर्तन की ओर यह विचार नियोजित परिवर्तन के तरीकों को निराश करता है। तथा इसका प्रतिकूल प्रभाव संगठनात्मक नवीनीकरण की प्रक्रिया के विकास पर काफी लम्बे समय तक रहता है। इसलिये 1970 व 1980 की समयावधि में अल्पकालीन विचार को गैर सरकारी संगठनों के विचारकों, दाताओं तथा नीति निर्माणकर्ताओं द्वारा प्रोत्साहन दिया गया जोकि गैर सरकारी संगठनों को सीमित समस्याओं को हल करने के लिये एक अस्थाई तौर पर एक साधन के रूप में देखते हैं। यह एक "भ्रमपूर्ण अवधारणा" या "संकीर्ण विचारधारा" गैर सरकारी संगठनों की भूमिका "अन्तराल को भरने के लिये" ऐसी स्थिति सरकार या बाजार के असफल होने की दशा में उत्पन्न होती है। यह सामान्य रूप से समझा जाता है, तथा साफ-साफ शब्दों में कहा जाता है कि गैर सरकारी संगठनों को संस्थागत खोजबीन के लिये पहल करनी चाहिए तथा अल्पकालीन, समयबद्ध तरीके से इस "अंतरालिक व्यवधान की भूमिका" के क्षेत्र से अपने आपको हटा लेना चाहिए। यह अवधारणा यह मानकर चलती है कि गैर सरकारी संगठनों को सरकारी अथवा बाजार की एजेंसियों की दक्षतापूर्ण गतिविधियों से कुछ भी लेना-देना नहीं है और न ही उनसे ऐसा कोई सरोकार ही है। इसके परिणामस्वरूप दीर्घ-कालीन संगठनात्मक क्षमता निर्माण, संस्थात्मक सुदृढ़ता तथा संगठनात्मक विकास को कभी भी उसका वास्तविक स्थान प्राप्त नहीं होगा और न ही उसे गैर सरकारी संगठनों के नेतृत्व, उनके दाताओं तथा मूल्यांकनकर्ताओं से ही उचित न्याय मिल पायेगा। गैर सरकारी संगठन के प्रपत्र को संगठन की दृष्टि से केवल अस्थाई रूप में ही देखा जाता है, और इसलिये इसको विधिक व तर्क संगत बनाने के लिये किये गये किसी भी प्रयास को दीर्घ-कालीन रूप में प्रांसगिक तथा क्रियाशील बनाने को अविचारणीय तथा अवांछित दोनों ही माना जाता है। गैर सरकारी संगठनों का नेतृत्व, उनके दातागण/संरक्षक आदि अभी निकट भविष्य तक गैर सरकारी संगठन की क्षमता निर्माण को केवल सीमित परिप्रेक्ष्य में देखते व सहायता प्रदान करते थे जो सीमित समय तक (2-3 वर्षों) में ही प्रभावी रूप से आवंटित धनराशि को प्रयोग करते हुए परियोजना को पूर्ण कर सकने में सक्षम हो सके। विश्व के इस दृष्टिकोण ने गैर सरकारी संगठनों के संगठनात्मक क्षमता-निर्माण के उद्देश्य को अत्यधिक

दुर्बल किया है गैर सरकारी संगठनों में संगठनात्मक विकास के प्रयासों की संभावना को भी सीमित कर दिया है।

परन्तु 1980 के उत्तरार्द्ध के प्रारम्भ, तथा त्रि-विकास (राज्य-बाजार-नागरिक समाज) के विषय में नवीन चिन्तन के प्रारम्भ से, नागरिक सामाजिक संगठनों की बढ़ती हुई मान्यता तथा उनके दीर्घ-कालीन भूमिका का महत्व जनतांत्रिक तथा सहभागी विकास को हमारे समाज में सुनिश्चित करता है। इस मान्यता ने दुर्बल गैर सरकारी संगठनों की संगठनात्मक क्षमता की वर्तमान वास्तविकता को उजागर कर दिया है। संगठनात्मक विकास को इस प्रकार की क्षमता के निर्माण की दिशा में संभावित प्रयासों के रूप में देखा जा रहा है। ठीक इसी प्रकार, किसी भी विकास परियोजना से सतत् लाभ सुनिश्चित करने के लिये प्रभावी स्थानीय संस्थानों (सरकारी तंत्र की सीमा के बाहर) को स्वीकार किया जाना प्रारम्भ कर दिया गया है। इस अवधारणा ने गैर सरकारी संगठनों की क्षमता-निर्माण की प्रक्रिया को एक महत्वपूर्ण आवश्यकता के रूप में वांछित विकास को प्राप्त करने के उद्देश्य से किया जा रहा है। उपरोक्त विश्लेषण संगठनात्मक विकास में मूलाधार तथा बढ़ती हुई रुचि के साथ गैर सरकारी संगठनों के परिप्रेक्ष्य में प्राप्त किया जा रहा है।

3 गैर सरकारी संगठनों में संगठनात्मक विकास के चरण

सामान्य संगठनात्मक विकास की प्रक्रिया में तीन मुख्य चरण होते हैं तथा इन चरणों का एक दूसरे से गहन संबंध अर्थात सीधा जुड़ाव होता है। इन चरणों को निम्नवत समझा जा सकता है :

1. परिवर्तन की आवश्यकता
2. खोजबीन या जाँच
3. समस्या समाधान हेतु प्रयास

1. परिवर्तन की आवश्यकता

संगठनात्मक विकास के प्रयासों की दिशा में पहला चरण उस समय होता है जब एक गैर सरकारी संगठन परिवर्तन की आवश्यकता को महसूस करता है। जबकि परिवर्तन के लिये दबाव (बाहरी तथा आंतरिक) लगातार एक गैर सरकारी संगठन पर हावी होते हैं। ऐसे में एक गैर सरकारी संगठन परिवर्तन की आवश्यकता को महसूस भी कर सकता है, और वह परिवर्तन की आवश्यकता को नहीं भी महसूस कर सकता है।

सामान्यतया किसी गैर सरकारी संगठन में परिवर्तन की आवश्यकता को प्रभावी रूप में उसके क्षेत्र, परियोजना कर्मचारियों, मुख्यालय में कार्यरत कर्मचारियों द्वारा तथा गैर सरकारी संगठन के नेतृत्व अथवा उसकी नियंत्रण परिषद द्वारा अथवा उसके दाता संस्थाओं द्वारा महसूस किया जाता है। कई बार तो परियोजना का मूल्यांकन ही परिवर्तन की आवश्यकता को महसूस करा देता है। कभी-कभी किसी दीर्घ-कालीन परियोजना का दाता भागीदार (जिसने गैर सरकारी संगठन विशेष के साथ वर्षों तक कार्य किया है) परिवर्तन की आवश्यकता को निश्चित रूप से महसूस करता

है तथा वह इस विषय पर गैर सरकारी संगठन के नेतृत्व तथा कर्मचारियों से इस संबंध में विचार-विमर्श कर सकता है।

संस्था में परिवर्तन की आवश्यकता को पहचानना संगठनात्मक विकास का प्रथम चरण है। परिवर्तन की आवश्यकता, इसके प्रति कटिबद्धता तथा नियोजित परिवर्तन की रूपरेखा आदर्श रूप से संस्था द्वारा अथवा इसके प्रमुख भागीदारों द्वारा की जानी चाहिए। यदि संस्था का प्रमुख अथवा संस्था की गवर्निंग बोर्ड इस आवश्यकता को महसूस करता है तो यह ज्यादा बेहतर एवं प्रभावी होगा।

यह भी महत्वपूर्ण है कि इस निर्णय को नियोजित परिवर्तन के रूप में संगठनात्मक विकास की एक सुव्यवस्थित प्रक्रिया के रूप में लिया जाना चाहिये, और यह गैर सरकारी संगठन, उसके नेतृत्व तथा भावी दिशा निर्देशों तथा संगठनात्मक विकास के संभावित दीर्घ-कालीन प्रभावों में जानकारी पूर्ण चयनों पर आधारित है। अगर दाताओं के दबाव के कारण संगठनात्मक विकास कार्यों को प्राथमिक रूप से प्रारम्भ किया जाता है जिसमें कि गैर सरकारी संगठन के नेतृत्व की इच्छा या स्वीकृति के अनुरूप नहीं किया जाता है तो उसके नष्ट हो जाने की संभावना बन जाती है और वह मात्र एक रिपोर्ट बन कर रह जाता है जोकि गैर सरकारी संगठन व उसके दाताओं की अलमारी में रखी धूल खा रही होती है। बहुत से गैर सरकारी संगठनों की गैर सरकारी संगठन परियोजनाओं की अधिकांश मूल्यांकन रिपोर्टों के भाग्य की तरह इनका भी यही भाग्य होता है। ज्ञात या जाने-बूझे मार्ग से कोई भी परिवर्तन, वर्तमान की बंधी-बंधाई आदतों से हटकर जोकि भविष्य के अनिश्चित मार्ग है, के प्रति विरोध, चिन्ता तथा आशंकायें किसी भी व्यक्तियों, समूहों तथा संगठनों में उत्पन्न हो सकती है। इसलिये संगठनात्मक विकास के प्रयासों को नियोजित परिवर्तन की दिशा में लगाने से पहले इसी प्रकार की समान प्रतिक्रियाओं को जानना आवश्यक होगा। इन प्रतिक्रियाओं की प्रकृति तथा प्रकार गैर सरकारी संगठनों में परिवर्तित होती रहती है लेकिन इन प्रतिक्रियाओं के महत्व व वास्तविकताओं को समझना आवश्यक है। जहां तक एक सामान्य गैर सरकारी संगठन का प्रश्न है, उनका नेतृत्व अपने गैर सरकारी संगठन में संगठनात्मक गतिशीलता की ओर बहुत नगण्य सा ध्यान देते है,

और यह भी एक सामान्य सी घटना है कि गैर सरकारी संगठनों का नेतृत्व कुछ हद तक किसी भी संगठन में नियोजित परिवर्तन की इस विश्वव्यापी परिदृश्य के प्रति संवेदनहीन होता है।

2. खोजबीन या जाँच (डायग्नोसिस)

परिवर्तन की आवश्यकता को महसूस करने तथा परिवर्तन के लिए संस्था की कटिबद्धता के बाद संगठनात्मक विकास का दूसरा चरण संगठनात्मक खोजबीन या जाँच (डायग्नोसिस) है। खोजबीन का अर्थ संगठनात्मक समस्याओं, संस्था के भविष्य, आदि संस्थागत मुद्दों से है। खोजबीन की प्रक्रिया कहीं से भी प्रारंभ हो सकती है। उदाहरणार्थ किसी संस्था द्वारा कोई परियोजना चलाई गई, परियोजना के मूल्यांकन करने पर यह सामने आया कि लक्ष्य समूह पर उसका पर्याप्त प्रभाव नहीं पड़ा है तो यह जाँच/खोजबीन के लिए प्रारंभिक मुद्दा बन जाएगा। इसी तरह संस्था में लैंगिक विषमता, कर्मचारियों के लिए उचित नीतियां, संस्था में कर्मचारियों के बीच आपसी टकराहट, कर्मचारी के बीच संबंध, आदि भी जाँच के प्रारंभिक बिन्दु हो सकते है। आय वृद्धि कार्यक्रम में लगातार दस वर्षों से निवेश करने के बावजूद भी यदि परियोजना आय जुटाने में असफल रहती है और अपने को संसाधन जुटाने में असमर्थ पाती है तो यही खोजबीन का शुरुआती बिन्दु हो सकता है।

खोजबीन या जाँच का तरीका (डायग्नोसिस का फ्रेमवर्क)

खोजबीन या जाँच कहीं से भी शुरू की जाय परन्तु यह समझना आवश्यक है कि खोजबीन का उद्देश्य समस्याओं, उनके कारणों व प्रकारों को व्यवस्थित रूप से समझना है। अतः खोजबीन के बिन्दु कुछ भी हों लेकिन इसके लिए संगठन की सम्पूर्णता में समझ होनी आवश्यक है। गैर सरकारी संगठन के एक भाग को भी विस्तृत रूप में समझना यदि गैर सरकारी संगठन की यह समझ संपूर्णता के विस्तृत दायरे में आती है तो इसे इसके विशिष्ट बाहरी वातावरण में ही समझा जा सकता है। यह प्रभावी उपाय अत्यन्त चुनौतीपूर्ण आवश्यकता है। इसलिये यह गैर सरकारी संगठनों की संरचना को समझने व उसके विकास की आवश्यकता को इंगित करता

है। यहां पर यह मुख्य बिन्दु नहीं है कि हम प्राइवेट संगठनों व निगमों या सरकारी एजेन्सियों द्वारा विकसित संगठनात्मक विकास व उसके अध्ययनों का अंधानुकरण करके उन्हें उधार रूप में ले लें, बल्कि हम अपने अनुभवों गैर सरकारी संगठनों के संगठनात्मक व्यवहार का विश्लेषण करके एक सिद्धान्त प्रतिपादित कर सकें। इस प्रकार का विश्लेषण ही गैर सरकारी संगठनों को समझने में मदद कर सकता है जोकि गैर सरकारी संगठनों से संबंधित है।

हालांकि इस स्थान व समय पर गैर सरकारी संगठनों से संबंधित संपूर्ण सिद्धान्त को समर्थित करना संभव नहीं है, फिर भी यहां पर यह कहना उचित होगा कि गैर सरकारी संगठनों की संगठनात्मक संरचना की विशिष्ट अवधारणाओं को संगठन की आवश्यकताओं के अनुरूप पहचान कर स्वीकारना आवश्यक है। इस पर समझ बनाने की दृष्टि से कुछ बिन्दुओं का उल्लेख निम्नवत है :

- लक्ष्य-आधारित सामाजिक परिवर्तनशील संगठन अपनी वांछित उपलब्धियों को नियामक, गुणात्मक तथा प्रक्रियात्मक उपलब्धियों के रूप में परिभाषित करते हैं। इसमें वांछित सामाजिक परिवर्तन चाहने वाले गैर सरकारी संस्थान तथा उसके निर्धारित लक्ष्यों, उसके कार्यक्रमों के लक्ष्यों तथा क्रियान्वयन रणनीतियों के संबंध में मोटे तौर पर एक संबंध स्थापित करने तथा उन्हें परिभाषित करने की आवश्यकता होती है।

- लक्ष्य-आधारित संगठनों यथा गैर सरकारी संगठन जटिल सामाजिक वास्तविकताओं के मध्य अपने कार्यक्रमों को चलाते हैं। चूंकि इसका प्राथमिक कार्य या प्रमुख क्रिया कलाप संगठनात्मक सीमाओं के बाध्य किये जाते है। संगठन का प्रमुख क्षेत्रों के बाह्य परिवेश से संबंधों का उसके अपने क्रिया-कलापों के ऊपर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है। यह उस समय और भी महत्वपूर्ण हो जाता है जब कि एक गैर सरकारी संगठन अपने क्रिया-कलाप तथा संसाधनात्मक सामग्री को बाहरी दाता क्षेत्रों, जोकि सामान्यतया भिन्न-भिन्न होते हैं और उन स्थानीय समुदायों जिनमें गैरसरकारी संगठन अपना प्रभाव डालना चाहता है, से पूर्णतया अलग होते है।

- गैर सरकारी संगठन अपने कर्मचारियों को अपने मूल्यों तथा सामाजिक परिवर्तनों के अपने आधार से आकर्षित करते हैं। ऐसे व्यक्ति प्रारम्भिक रूप में नियामक (मात्र व्यावहारिक के विपरीत) रूप में संगठन से संबंध रखते हैं। कुछ विशिष्ट क्रिया-कलाप, यथा लेखा, प्रशासन, आदि में कर्मचारी अधिक व्यावहारिक कारणों (मै यहाँ काम करने के लिये आया हूँ न कि किसी अन्य कारण से आया हूँ) की भावना से आता है। गैर सरकारी संगठन के कर्मचारियों में, मनोबल, प्रेरणाशक्ति, उत्पादकता तथा संगठनात्मक संस्कृति आदि विषय इसी भावना से प्रभावित होती है।

- गैर सरकारी संगठन का निर्माण व उसकी गतिविधियां, कई मामलों में उसके संस्थापक के व्यक्तित्व का प्रतिबिम्ब होती है। यह स्थिति उसके संस्थापक नेतृत्व को अत्यधिक शक्तिशाली या संभवतः गैर सरकारी संगठन के संगठनात्मक ढांचे में केन्द्रीय मुख्य स्थान प्रदान कर देती है, और इसीलिये एक गैर सरकारी संगठन में निर्णय लेने की क्षमता अत्यधिक व्यक्तिगत हो जाती है।

- चूंकि अधिकांश गैर सरकारी संगठनों का नेतृत्व उनके द्वारा प्राप्त किये जाने वाले लक्ष्यों के प्रति कटिबद्ध होता है, उनको एक अन्दरूनी अरूचि तथा गैर सरकारी संगठनों के अन्य कार्यों के प्रति अवहेलना की भावना होती है। (उदाहरण के लिये वित्तीय प्रबंधन, कार्यालय तथा आधारभूत संरचना का रख-रखाव, कर्मिकों तथा विधिक मामलों आदि) यह पहलू व इसके साथ जुड़े हुए लचीलेपन तथा प्रतिक्रियाशीलता की खोज व इसके संबंध में बनाये गये कार्यक्रम गैर सरकारी संगठनों के संगठन को काफी हद तक अधोसंगठित व्यवस्था (सरकारी नौकरशाही तंत्र या एक कारखाने के अत्यधिक संगठित व्यवस्था के विपरीत) वाला बना देते हैं। गैर सरकारी संगठनों की गतिविधियों के कई पहलुओं, उनकी संगठनात्मक संरचना, नियम/प्रक्रियायें तथा व्यवस्थायें, भूमिकाओं की परिभाषायें, प्रतिनिधित्व तथा उत्तरदायित्व आदि अनिश्चित, अस्पष्ट तथा अनौपचारिक होते हैं।

- अंत में, जैसा कि पहले भी स्पष्ट किया जा चुका है, कि गैर सरकारी संस्थान बहु आयामीय समस्याओं के जाल में अपना कार्य करते है, उनमें से कई एक

दूसरे के साथ संघर्ष में फंसे होते है। इसके अतिरिक्त उनकी नियंत्रक परिषदें, शीर्ष नेतृत्व, मुख्य कार्यकर्ता, क्षेत्रीय कर्मचारी, तथा अन्य कर्मचारीगण, स्थानीय सामुदायिक समूह, सामाजिक-राजनैतिक संस्थायें, दातागण तथा सहायताकर्तागण, सरकारी विकास एजेंसियां और नियंत्रक परिषदें, अन्य गैर सरकारी संगठन तथा जन साधारण अलग-अलग से दिखाई देते है, कभी-कभी विविध रूप में, तथा गैर सरकारी संगठन में संघर्षपूर्ण ढेर के रूप में दिखते हैं। अतः प्रभावी गैर सरकारी संगठन की गतिविधियों में कभी-कभी एक संवेदनशील तथा नाजुक संतुलन विभिन्न प्रकार के पहलूओं में बनाना पड़ता है ताकि भलीभांति सक्रिय एवं वांछित व इच्छित लक्ष्य को प्राप्त किया जा सके। इसलिये, गैर सरकारी संगठन में खोजबीन/जाँच संगठनात्मक विकास की प्रक्रिया में एक महत्वपूर्ण कदम है, जिसमें एक संगठन की संरचना में उचित फ्रेमवर्क की समुचित आवश्यकता होती है।

खोजबीन (डायग्नॉसिस) की प्रक्रिया

खोजबीन के विषय में दूसरा महत्वपूर्ण पहलू इसकी प्रक्रिया से संबंधित है। खोजबीन का अर्थ जानकारियाँ एकत्र करने तथा उनके विश्लेषण से है। निश्चित रूप से यह एक शोधात्मक प्रक्रिया है जिसमें गैर सरकारी संस्थानों के संगठन का गहन अध्ययन किया जाता है। संगठनात्मक विकास की प्रक्रिया को प्रारम्भ करने का निर्णय लेकर तथा खोजबीन की प्रक्रिया को भी लागू करके किसी भी गैर सरकारी संस्थान में कुछेक प्रकार के प्रयास प्रारम्भ किये जाते हैं। इसके अनुसार कि खोजबीन के प्रयासों से गैर सरकारी संस्थान की गतिविधियों के सुधार में सहायता मिलेगी, खोजबीन की प्रक्रिया को प्रारम्भ करना काफी निर्णायक होगा। प्रमुख नेतृत्वकर्ताओं की इस प्रक्रिया में सहभागिता और संगठन की विस्तृत सदस्यता दोनों ही परिणामों के प्रति कटिबद्धता तथा परिवर्तन को लागू करने का आधार बनाता है। यह सही जानकारियों को एकत्र करने तथा उनके विश्लेषण में भी मददगार साबित होता है। संगठनात्मक खोजबीन या जाँच की प्रक्रिया डाक्टर द्वारा किसी रोगी की जाँच करने से अलग है। क्योंकि डाक्टर सामान्यतया लक्षणों की जांच कर औषधियाँ लिख देता

है जबकि संगठनात्मक खोजबीन एक सहभागी प्रक्रिया है। इसलिए संगठनात्मक विकास की प्रक्रिया को नियोजित एवं प्रभावी रूप से फैसिलिटेट किया जाना आवश्यक है।

3. समस्या समाधान हेतु प्रयास

खोजबीन तथा उपलब्ध जानकारियों के आधार पर समस्याओं के समाधान हेतु प्रयास, संगठनात्मक विकास का अगला चरण है। इसके अन्तर्गत संस्था के संबंध, कार्यनीतियों का निर्धारण, सुव्यवस्थित योजना, आदि पक्षों को मजबूत कर संगठनात्मक विकास के प्रयासों द्वारा संस्था में सुधार लाया जा सकता है। खोजबीन की प्रक्रिया संगठनात्मक विकास के लिए किस तरह के प्रयास किये जाने चाहिए, के निर्धारण में भी सहायक होती है। संगठनात्मक विकास में आवश्यक सुधार लाने हेतु संगठनात्मक विकास प्रयासों को मुख्य रूप से तीन श्रेणियों में बाँटा जा सकता है :

अ. पहचान एवं रणनीति

संगठनात्मक विकास एक गैर सरकारी संगठन की पहचान व रणनीति को स्पष्ट करने तथा पहचानने में सहायक होता है। उनके परिवर्तनशील बाहरी वातावरण में, गैर सरकारी संगठन यह आवश्यकता महसूस करते है कि वे अपने विजन को पुनः नियोजित कर सकें, तथा अपने संगठनात्मक लक्ष्य को पुनः निर्धारित कर सकें, तथा अपने विकासात्मक प्रयासों को विस्तृत रणनीति के अनुसार पुनः परिभाषित कर सकें। इस प्रकार के संगठनात्मक विकास को जन साधारण की भाषा में रणनीति नियोजन कहा जाता है। इसमें "स्वाट"/"स्वाक" विश्लेषण (गैर सरकारी संगठन में ताकत तथा कमजोरियों का आंकलन, अवसरों की पहचान, तथा बाहरी पर्यावरणीय बाधायें आदि) को जानना आवश्यक होता है।

यदि एक बार संस्था अपनी ताकत, कमजोरी, अवसर व बाधाओं का आंकलन कर देती है तो उसके बाद अगला चरण संस्था के विस्तृत क्षेत्र का मानचित्रण करना है। जैसे समुदाय, सरकार, बाजार, नागरिक समाज के अन्य घटकों आदि की पहचान

करना है। पहचान के बाद उनके साथ वर्तमान संबंधों का आंकलन तथा भावी संबंधों को बेहतर बनाने हेतु विकल्पों का चुनाव किया जाता है। इन उपलब्ध अवसरों, क्षमताओं, बाधाओं, विकल्पों आदि के आधार पर संगठन भविष्य (3-5 वर्ष) के लिए संस्थागत रणनीति, कार्यक्रमों का निर्धारण आदि को निर्धारित करता है। इस निर्धारण की प्रक्रिया में कई रणनीतिक मुद्दे सामने उभर कर आते हैं जिनमें से संगठन को उचित एवं आवश्यक मुद्दों का चुनाव करना होता है ताकि वे प्रभावी व नियोजित रूप से कार्य कर सकें।

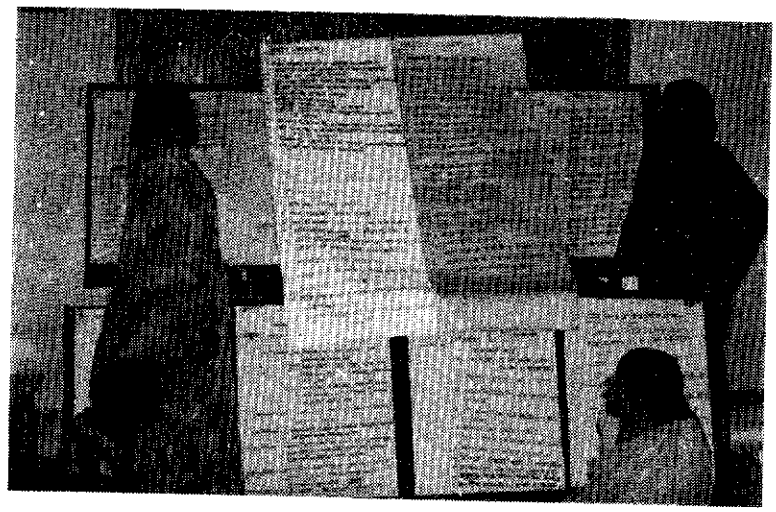

संगठनात्मक विकास के इन प्रयासों का निर्धारण गंभीर जुड़ाव तथा गैर सरकारी संगठनों के नेतृत्व की निर्णय क्षमता, जिसमें उनका गवर्निंग बोर्ड भी सम्मिलित होता है, के द्वारा तय किया जाता है। यदि एक संगठनात्मक विकास रणनीति नियोजनों की प्रक्रिया से प्रारम्भ होता है, तो उसमें संगठन के नियोजन, डिजाइन तथा कर्मचारियों की भूमिका का निर्धारण तथा विकल्पों के पुनर्गठन की एक क्रमबद्ध प्रक्रिया प्रारम्भ हो जाती है।

अन्य प्रकार के संगठनात्मक विकास के प्रयासों की इस श्रेणी को कभी-कभी "भविष्य खोजी संगोष्ठी" विधि के नाम से जाना जाता है। इस विधि में एक गैर

सरकारी संगठन तथा उसके प्रमुख बाहरी परिवेश तथा बाहरी भागीदारों और उसके अपने संबंधों के पुनर्निर्धारण की उन्नति तथा संशोधन किया जाता है। यह एक अंतः संगठनात्मक सुधार का प्रयास है, इसमें सामान्यतया विधि व विभिन्न प्रकार के जन साधारण वर्ग की खोजबीन, उसका विश्लेषण तथा कुछेक संयुक्त कार्यों के नियोजन आदि को सम्मिलित किया जाता है। सूचनातंत्र का विकास भी इस प्रयास का एक अन्य परिणाम है। साधारणतया इससे गैर सरकारी संगठनों के संबंध उसके बाहरी वातावरण के भागों से स्थापित, सुदृढ़ तथा निर्मित होते हैं। इस प्रकार के प्रयास या हस्तक्षेप को संस्थागत सुदृढ़ता के नाम से भी जाना जाता है।

ब. मानवीय प्रक्रियायें

संगठनात्मक विकास में मानवीय प्रक्रियायें सर्वाधिक प्रचलित तथा किसी भी संगठनात्मक विकास की सबसे अधिक जानी पहचानी प्रतिक्रिया है। ये प्रयास एक गैर सरकारी संगठन के लिये मानवीय आयामों के केन्द्र बिन्दु है। यही प्रयास एक गैर सरकारी संगठन की गतिविधियों की प्रक्रियाओं को उच्चतम स्तर तक प्रेरित करने में सहायक होता है। यह प्रक्रियायें संचारात्मक, सहभागी, निर्णयात्मक, संघर्ष या समस्या समाधानकारी, सहयोगी गतिविधियों वाली, अन्तः विभागीय संबंधों, व्यक्तिगत प्रेरणा, कटिबद्धता तथा मनोबल, संगठनात्मक नियमों, मूल्यों, संस्कृति, नेतृत्व के प्रकारों आदि-आदि की जनक हैं। वास्तविक रूप में, संगठनात्मक विकास के प्रयास प्राथमिक रूप में इस प्रकार के मानवीय तथा प्रक्रियात्मक विषयों को पहचानने में सहयोग करती है।

मानव संसाधन विकास (ह्यूमन रिसोर्स डेवलपमेंट - एच.आर.डी.), मानव संसाधन प्रबंधन (एच.आर.एम.), मानव क्षमता विकास (एच.पी.डी.) तथा कर्मचारियों का व्यक्तिगत प्रशिक्षण यह सब इस तरह के प्रयासों के कुछ उदाहरण मात्र हैं। इसमें दो पहलू हैं। पहला, इसके द्वारा किसी गैर सरकारी संगठन में मानव संधन विकास को सुव्यवस्थित, स्थापित तथा मजबूत करना और नीतियों तथा व्यवस्थाओं को उसके अनुरूप व्यवस्थित करना। परम्परागत कर्मचारियों से जुड़ी गतिविधियों जैसे- कर्मचारियों की नियुक्ति, अधिस्थापन, अभिमुखीकरण, भूमिका निर्धारण, सेवा शर्तें,

मुआवजा पैकेज, व्यक्तिगत आचार संहिता नियोजन, तथा परफार्मेंस रिव्यू आदि इसमें सम्मिलित किये जा सकते है।

अधिकांश गैर सरकारी संगठनों में, उनके लोक केन्द्रित विकास दर्शन के बावजूद भी उनके पास अपर्याप्त कार्मिक नीतियां व व्यवस्थायें रहती है। यह भी तब जब कि गैर सरकारी संस्थान प्रशिक्षण को संगठनात्मक विकास के प्रयास के रूप में प्रयोग करते हैं, और इससे कभी-कभी यह प्रतीत होता है कि यह एक दीर्घ-कालीन मानव शक्ति नियोजन तथा मानव संसाधन विकास का साधन भविष्य में जन साधारण के लिये हो सकता है। अतः संगठनात्मक विकास के ढांचे में और संगठनात्मक खोजबीन के संदर्भ में कई गैर सरकारी संगठनों के लिये प्रयासों की यह श्रृंखला काफी महत्वपूर्ण है।

इस तरह के दूसरे प्रयासों में वे प्रयास है जो कि किसी भी संगठन की प्रक्रियाओं को संशोधित व उन्नत करने में सहायक होती हैं। इसका एक सामान्य उदाहरण टीम बिल्डिंग है, जोकि किसी भी संस्था की प्रक्रियाओं व गतिविधियों की उन्नति की ओर केन्द्रित कर सके।

इस उदाहरण का एक अन्य रूप भूमिकाओं का स्पष्टीकरण तथा पदाधिकारी-अधीनस्थ कर्मचारियों व कर्मचारियों के बीच वार्ता भी है। प्रबंधक, नेतृत्व, कर्मचारी दल, उत्पादन अनुभाग या एक गैर सरकारी संगठन में प्रक्रिया परामर्शदात्री विधि के द्वारा आपसी समझदारी में वृद्धि व उपरोक्त के मध्य प्रगतिशील अवधारणा को भी इस संगठनात्मक विकास में प्रयासों को सामान्य रूप से उपयोग में लाया जाता है।

संगठनात्मक विकास के प्रयासों की द्वितीय श्रेणी में निरन्तर प्रशिक्षण, तथा कर्मचारियों में क्षमता निर्माण आदि आवश्यक हैं। प्रशिक्षण द्वारा व्यवहार का निर्माण, ज्ञान तथा जानकारी, व्यावसायिक, तकनीकी तथा प्रबंधकीय कुशलता आदि का निर्माण व विकास तथा इसमें व्यक्तिगत अभिवृद्धि तथा विकास (जैसे संवेदनशीलता प्रशिक्षण) आदि को सम्मिलित व उस पर विशेष ध्यान केन्द्रित किया जाता है।

तीसरे दल परामर्श में या शांति बनाये रखने तथा अंतः समूह प्रतिस्पर्द्धा या आमने-सामने होना, संगठनात्मक विकासीय प्रयास के कुछ अन्य उदाहरण है जोकि अंतर विभागीय संबंधों, सहसंबंधों तथा प्रक्रियाओं में सुधार के लक्ष्य से संबंधित हैं। इस प्रकार के प्रयास विशेष रूप से वही उपयोगी होती है जहां पर अंतर विभागीय संघर्ष/टकराव होते है।

कुछेक संगठनात्मक विकास कार्य संगठन की अनौपचारिक संस्कृति को सुधारने के उद्देश्य से तथा बेहतर कार्यविधि एवं संगठनात्मक प्रभावशीलता के उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए कार्यरत होते हैं। इससे नियमों व मूल्यों में विकासात्मक परिवर्तन दिखता है जोकि गैर सरकारी संगठनों में निर्विवादित रूप से प्रयोग में लाई जाती हैं और इनका दृष्टिकोण, नियमों तथा मूल्यों में एक ओर निकट सामंजस्य बनाना तथा दूसरी ओर संगठनात्मक अर्थात एक ओर यह संगठनात्मक व्यवस्थाओं को बेहतर बनाने में मददगार होता है तथा दूसरी ओर संगठन को प्रभावी बनाता है। प्रभावशीलता की आवश्यकता को भी ध्यान में रखना होता है।

स. तकनीकी - संरचना

संगठनात्मक विकासीय प्रयासों की तृतीय श्रेणी गैर सरकारी संगठन की तकनीकी एवं संस्थागत ढाँचे के बिन्दु पर केन्द्रित है। तकनीकी से तात्पर्य नये कार्य करने के नये रास्तों, नई तकनीकों तथा उपकरणों से है जोकि किसी भी गैर सरकारी संस्थान के कार्यक्रमों के केन्द्र बिन्दु होते है तथा प्राथमिक कार्यों को करने के लिये उनकी आवश्यकता बराबर ही होती रहती है। उदाहरण के लिये जल उत्पादन तकनीकी प्राथमिक स्वास्थ्य रक्षा से पूर्णतया अलग है। इसके साथ ही संस्था को प्रभावी सुचारु रूप से चलाने के लिए एक संस्थागत ढाँचे की आवश्यकता होती है। संस्थागत तकनीकी तथा ढाँचे के बीच आपसी तालमेल होना नितांत आवश्यक है। ढाँचे का अर्थ संस्थागत कार्यों से है। इसमें कार्यों का निर्धारण, भूमिकाओं का उत्तरदायित्व तथा उनकी जवाबदारियों, संचार व्यवस्था, नियम, प्रक्रियायें तथा व्यवस्थाओं आदि का निर्धारण आवंटन व कार्य विभाजन आदि सभी कुछ किया जाता है।

सामान्यतः गैर सरकारी संगठन जोकि असंगठित व्यवस्थाओं के रूप में होते है। संगठनात्मक विकास के प्रयासों के एक भाग के रूप में, कार्यों की औपचारिकताओं, कार्यों की परिभाषा या वितरण, स्पष्टीकरण, तथा विभिन्न कार्यो के बीच एक सक्रिय संचार तंत्र, संपर्क व संबंध तथा नियमों, (जैसे - अध्यक्ष की भूमिका के साथ संबंध और नियंत्रण परिषद के कोषाध्यक्ष तथा गैर सरकारी संगठन के प्रमुख कार्यकर्ता आदि के मध्य संपर्कों और संबंधों का एक विकसित तंत्र), दैनिक निर्णयों की औपचारिकता (जैसे कार्यालय का कार्य समय, अवकाश, स्वीकृत व्ययों के लिये सक्षमता प्रदान किया जाना आदि), प्रक्रियाओं का विनियमितीकरण करना (जैसे लेखा अनुभाग से अग्रिम लिये जाने हेतु प्रक्रिया जोकि क्षेत्र में कार्यकर्ता हेतु आवश्यक है) तथा कार्यालय व्यवस्था (जैसे फाइलों का समुचित रख रखाव एवं रिकार्ड्स का समुचित दस्तावेजीकरण), कार्यक्रम नियोजन व्यवस्था, अनुश्रवण तथा मूल्यांकन, वित्तीय निर्णय करने के लिये एम.आई.एस. व्यवस्था तथा उसका दस्तावेजीकरण गैर सरकारी संगठनों की एक अन्य सामान्य प्रक्रिया है। वर्तमान नियमों, प्रक्रियाओं तथा व्यवस्थाओं में ढील देने के बजाय गैर सरकारी संगठन सामान्यतः अपनी आन्तरिक गतिशीलता के मार्गो को व्यवस्थित करने के लिये इन प्रयासों को औपचारिक रूप से व्यवस्थित करते हैं।

संगठनात्मक विकास के दूसरे भाग में इन प्रयासों को कर्मचारियों की रचनात्मकता, उत्तरदायित्वों तथा प्रत्येक व्यक्ति के कार्य की स्पष्टता के माध्यम से उन्नत तथा प्रेरित करने के लिये प्रयुक्त किया जाता है। गैर सरकारी संगठनों में हस्पक्षेप कभी-कभी नयी तकनीक को प्रारम्भ करने का भी कार्य करती है, विशेष रूप से संचार माध्यम प्रौद्योगिकी के रूप में जहां पर कि उपलब्ध व्यवस्था को और अधिक उन्नत किया जाता है अथवा नयी तकनीक को प्रारम्भ करने के लिये स्रोत का सहारा लिया जाता है। संगठनात्मक विकास में इस तरह के प्रयासों को ''सामाजिक-तकनीकी व्यवस्था'' के मार्ग के नाम से जाना जाता है, जिसमें संगठन के लोग, ढाँचा तथा तकनीकी घटकों पर संयुक्त रूप से विचार करके एक व्यावहारिक रूपरेखा का निर्माण किया जाता है।

संपूर्ण रूप में संगठनात्मक विकास के इस तरह के प्रयासों को संगठनात्मक

रूपरेखा (ऑर्गेनाइजेशनल डिजाइन) के नाम से जाना जाता है तथा इसमें किसी भी गैर सरकारी संगठन में तकनीक और ढाँचागत व्यवस्था को आवश्यकतानुसार देखा व समझा जाता है। संक्षेप में, इसलिये खोजबीन के परिणाम स्वरूप गैर सरकारी संगठनों में समुचित रूप से उपयोग के लिये संगठनात्मक विकास के विशाल आयामों वाला क्षेत्र आवश्यक बदलाव के लिये पूरी तौर से खुला हुआ है। ठीक इसी प्रकार प्रत्येक संगठनात्मक विकास के प्रयासों के लिये नियोजन के भी सभी रास्ते खुले हुए हैं जिनको सावधानी व सतर्कतापूर्वक इस प्रकार प्रयोग में लाया जाना चाहिये कि इसके लाभार्थी तथा गैर सरकारी संगठन के नेतृत्व इसमें पूरी तौर से सम्मिलित हों तथा इन हस्तक्षेपों के क्रियान्वयन में अपनी निजी भागीदारी को भी महसूस करें। इसी प्रकार संगठनात्मक विकास के प्रयास उसके क्रियान्वयन तथा उसके परिणामों को भी अग्रिम रूप में अनुमान लगाकर इस प्रकार नियोजित किया जाना चाहिये कि गैर सरकारी संगठन की उन्नति व भावी कार्यक्रम के लिये आधार तैयार हो जिस पर गंभीरतापूर्वक विचार के साथ कार्य किया जा सके।

4 गैर सरकारी संगठनों में संगठनात्मक विकास की आवश्यकतायें

संगठनात्मक विकास की प्रक्रिया में सबसे महत्वपूर्ण पक्ष संस्था के नेतृत्व की संगठन को पुनर्जीवित करने की इच्छा (या संगठन में बदलाव लाने की इच्छा) तथा उसके प्रति कटिबद्धता आवश्यक है। इसके लिए संस्था के संस्थापक सदस्यों व गवर्निंग बोर्ड की इच्छा शक्ति व आवश्यकता की पहचान व उसके लिए तैयार होना आवश्यक व महत्वपूर्ण है। यदि संस्थापक इस प्रयास के लिए सहर्ष तैयार होते हैं तब दूसरा प्रश्न आता कौन करेगा?

संगठनात्मक विकास के विषय में फैसलीटेशन से संबंधित एक प्रश्न साधारणतया पूछा जाता है कि खोजबीन या डायग्नोसिस की प्रक्रिया किसके द्वारा की जानी चाहिये? संगठनात्मक विकास के प्रयास हेतु कौन सक्षम है? संगठनात्मक विकास हेतु आवश्यक विशेषज्ञता तथा व्यावसायिक क्षमता, उसकी खोजबीन व हस्तक्षेप हेतु सामान्यतया किसी भी गैर सरकारी संगठन में उपलब्ध नहीं है। कुछेक बड़े पैमाने वाले व्यक्तिगत निगमों तथा सरकारी एजेंसियों आदि में उनके अपने स्वयं के संगठनात्मक विकास विभाग तथा अपनी क्षमता होती है। यहां तक कि वे समय-समय पर बाहर से इस विषय के विशेषज्ञों को संगठनात्मक विकास की जटिल व महत्वपूर्ण समस्याओं पर विचार-विमर्श हेतु आमंत्रित करते हैं। गैर सरकारी संगठनों को यदि वे संगठनात्मक विकास के विकल्प का चुनाव करते हैं तो उन्हें संगठनात्मक खोजबीन तथा हस्तक्षेपों/प्रयासों के लिये ऐसे गैर सरकारी संगठनों को बाहर से फैसीलिटेटर को आमंत्रित करना होगा।

इसकी एक और आवश्यकता समय की है। एक गैर सरकारी संगठन को संगठनात्मक विकास कब करना चाहिये? संगठनात्मक विकास में कितना समय लगेगा? स्पष्ट रूप से संगठनात्मक विकास एक सतत् प्रक्रिया नहीं है। संगठनात्मक विकास एक निश्चित अवधि की प्रक्रिया है (प्रत्येक 3 से 5 वर्ष) जोकि वर्तमान

समस्याओं के फलस्वरूप ही की जाती है तथा इसमें परिवर्तन आंतरिक व बाहरी दबावों को ध्यान में रखते हुए ही किया जाता है। संगठनात्मक विकास में लगने वाला समय इस पर निर्भर करता है कि उसके कार्यक्षेत्र का कितना विस्तार है तथा प्रयासों की गंभीरता व गहराई कितनी है। सामान्यतया एक बड़े गैर सरकारी संस्थान के लिये संगठनात्मक विकास की प्रक्रिया एक विस्तृत प्रक्रिया है जिसमें एक से दो साल तक लग सकते हैं (यदि पूर्णरूपेण बाहरी परामर्शदाताओं पर ही निर्भर रहा जाये)। संगठनात्मक विकास के लिये संपूर्ण संसाधनों की आवश्यकता की भी समस्या उत्पन्न होती है। संसाधनों में उच्चतम नेतृत्व के पास उपलब्ध समय, गैर सरकारी संगठन के वे कर्मचारी जोकि इस खोजबीन व आवश्यक हस्तक्षेप की प्रक्रिया में भागीदारी करेंगे, बैठकों के लिये संसाधन, कार्यशालायें, अध्ययनों, बाहरी परामर्शदाताओं के लिये संसाधन आदि की व्यवस्था करना आदि-आदि भी महत्वपूर्ण है। इसके पहले कि इस संगठनात्मक विकास की प्रक्रिया को प्रारम्भ किया जाये संगठनात्मक विकास के लिये स्पष्ट तथा संसाधनों हेतु पूर्व योजना, संगठनात्मक विकास के लिये व्यवस्थायें किसी भी गैर सरकारी संगठन के लिये इस प्रकार की प्रक्रिया हेतु अत्यधिक आवश्यक हैं। एक गैर सरकारी संगठन के लिये इन आवश्यकताओं जिनके कारण इन्हें तत्परता, समय, बाहरी परामर्शदाताओं एवं संसाधनों आदि की ओर विशेष ध्यान देना होगा।

गैर सरकारी संस्थाओं के साथ संगठनात्मक विकास के भावी विषय

जैसा कि पहले भी स्पष्ट किया गया है, कि गैर सरकारी संगठन के साथ संगठनात्मक विकास एक नयी अवधारणा है, परन्तु यह काफी तेजी से गति पकड़ रही है। संगठनात्मक विकास को उचित एवं व्यावहारिक बनाने के लिये आवश्यक तथा प्रभावी एवं विकासशील गैर सरकारी संस्थान चाहिये, जिसकी क्षमतायें, संगठनात्मक विकास के अभ्यासकर्ता तथा गैर सरकारी संगठन का नेतृत्व और उसके भागीदार कुछेक भावी विषयों पर सावधानीपूर्वक गंभीरता से विचार कर सकें।

क. पहला विषय गैर सरकारी संगठनों के लिये संगठनात्मक विकास की मांग से संबंधित है। क्या संगठनात्मक विकास की यह मांग गैर सरकारी संगठनों के

दाताओं की मांग पर ही अधिकांश रूप में निर्भर करती है? क्या दातागण गैर सरकारी संगठनों से संगठनात्मक विकास की मांग कर रहे है? (उनके दातागण कौन हैं?) ताकि उनके द्वारा दिये गये धन का परियोजना के उद्देश्यों में सफलतापूर्वक प्रयोग किया जा सके। या फिर यह मांग गैर सरकारी संगठन के शासन तंत्र तथा उसके नेतृत्व की ओर भी की गई है? यदि यह केवल पहले दाताओं की ओर से की गई है, तब संगठनात्मक विकास के अल्प-कालीन होने का जोखिम है (केवल गैर सरकारी संगठन जिनके पास विशिष्ट परियोजनाओं में व्यय के लिये धनराशि है) तथा यह कम समय की है। यह केवल तभी तक चलेंगी जब तक कि प्रमुख दाता यह सोचे कि संगठनात्मक विकास उन सब रोगों के लिये रामबाण है जिन्हें उन्होंने गैर सरकारी संगठन के साथ काम करते हुए अनुभव किया है। दीर्घकालीन संस्थागत विकास, गैर सरकारी संगठनों के संपूर्ण क्षेत्र तथा नागरिक समाज के उत्थान के लिये होना चाहिये और इसका दीर्घ कालीन लक्ष्य होना चाहिये, न कि किसी एक गैर सरकारी संगठन का संगठनात्मक विकास मात्र एक अल्पकालीन परियोजना के क्रियान्वयन तक ही सीमित हो। संगठनात्मक विकास के इस आशय की कटिबद्धता गैर सरकारी संगठन के नेतृत्व तथा दाताओं दोनों में ही होनी चाहिये।

ख. संगठनात्मक विकास की उपलब्ध तकनीकी बड़े वाणिज्यिक संस्थानों तथा सरकारी संस्थानों के सिद्धान्तों तथा अभ्यास के द्वारा विकसित की गई है। नागरिक समाज की आधारभूत संरचना को समझने के लिये गैर सरकारी संगठनों को समुचित खोजबीन के विकास की और अधिक आवश्यकता होगी। इसी प्रकार, विधियां तथा तकनीकों की समुचित आवश्यकता गैर सरकारी संगठन के आकार, संस्कृति, प्राथमिक कार्य तथा नेतृत्व की आवश्यकताओं को गैर सरकारी संगठनों द्वारा प्रभावी ढंग से खोज कर संगठनात्मक विकास में लागू करनी चाहिये।

इसमें भी संगठनात्मक विकास हेतु नैतिक मूल्यों तथा मापदण्डों को गैर सरकारी संगठनों के अनुरूप विकसित करना अपने आप में स्वयं एक कठिन कार्य है। संगठनात्मक विकास की मुख्य धारा में संगठनात्मक विकास का

व्यावसायीकरण तथा अभ्यासों को सुव्यवस्थित करना भी सम्मिलित है। अब से पहले कभी भी गैर सरकारी संगठनों से संबंधित संगठनात्मक विकास के मूल्यों को सुस्पष्ट तथा संगठनात्मक विकास के आचरण को व्यावसायिक मापदण्डों के साथ गैर सरकारी संगठनों में विशिष्ट रूप से जोड़ा गया हो। अन्यथा संगठनात्मक विकास के नाम पर गैर सरकारी संगठनों के साथ मशरूम की तरह जगह-जगह पर विकासपरक संस्थायें बन गई थीं जोकि सभी प्रकार के कार्यों को संगठनात्मक विकास के नाम पर अंजाम दे रही थीं।

ग. अंत में, गैर सरकारी संगठनों के साथ में संगठनात्मक विकास को सक्षम रूप से सरलीकृत करने के लिये प्रशिक्षण प्राप्त लाभदायक कार्यकर्ताओं की काफी कमी आड़े आती है। संगठनात्मक विकास के कार्यकर्ता जोकि व्यक्तिगत निगमों तथा सरकारी नौकरशाही के साथ कार्यरत् हैं को संगठनात्मक विकास परामर्शदाताओं व प्रक्रियाओं के सरलीकरण के रूप में आमंत्रित करते हैं। गैर सरकारी संगठनों के संगठनात्मक विकास के सरलीकरण तथा दीर्घकालीन क्षमता निर्माण की आवश्यकतानुसार तथा बढ़ती हुई आवश्यकताओं के अनुरूप व्यावसायिक दक्षताओं के निर्माण हेतु आवश्यक हैं। यह बड़े गैर सरकारी संगठनों में संगठनात्मक विकास की क्षमता के स्वयं में निर्माण, उनके प्रशिक्षण विभागों तथा गैर सरकारी संगठनात्मक सहायता के संगठनों आदि के लिये चुनौतियां उत्पन्न करता है। नागरिक समाज के कार्यकर्ताओं के दीर्घकालीन व्यवहारिकता आदि के संस्थागत आधार तथा समुचित संगठनात्मक विकास में प्रयासों हेतु मजबूती आदि का इस दिशा में अपना योगदान होता है।

संदर्भ

1. एल.डेविड ब्राउन एण्ड जेन जी. कॉवे, "आर्गेनाइजेशनल डेवलपमेंट इन सोशल चेन्ज ऑर्गेनाइजेशन्स : सम इम्प्लेकेशन्स फॉर प्रैक्टिस", आई.डी. आर. रिर्पोट्स (आई.डी.आर.वोस्टन) वाल्यूम 4(2) 1987.

2. एल. डेविड ब्राउन एण्ड जेन जी कॉवे, "डेवलमेंट ऑर्गेनाइजेशन्स एण्ड ऑर्गेनाइजेशन डेवलपमेंट : टुवर्ड एन एक्सपेन्डेड फैराडिग्म फॉर ऑर्गेनाइजेशन डेवलपमेंट", आई.डी.आर. रिपोर्ट्स (आई.डी.आर. बोस्टन) वाल्यूम 4(5), 1987.

3. एल. डेविड ब्राउन एण्ड राजेश टण्डन, "इन्स्टीट्यूशनल डेवलपमेंट फॉर स्ट्रेंथनिंग सिविल सोसायटी", जरनल फॉर इण्टरनेशनल डेवलपमेंट, (प्रिया, न्यू डेलही), वॉल्यूम 1(i) नवम्बर, 1994 पी. 3-17.

4. एडगर एच. शाइन एण्ड रिचर्ड बेकहार्ड (एड.)- "एडिसन वेसले सीरीज ऑन ऑर्गेनाइजेशनल डेवलपमेंट", एडिसन-वेसले पब्लिशिंग कम्पनी, (मैसारयूसेट्स, 1987).

5. फाउलर ए. कैम्पलेल जी.एण्ड प्राट, बी. "इन्स्टीट्यूशनल डेवलपमेंट एण्ड एन.जी.ओज इन अफ्रीका - पॉलिसी प्रॉस्पेक्टिस फॉर योरोपियन डेवलपमेंट एजेन्सीज" इन्ट्रैक, यूके (1992).

6. सुशान्त अग्रवाल एण्ड डॉ. राजेश टण्डन, "कासाज एक्सपीरियेन्स फ्रॉम ओडी प्रॉसेस - चैलेन्जेज, एडवान्टेजेस एण्ड कान्सट्रेन्टस्", जनरल फॉर इण्टरनेशनल डेवलपमेंट (प्रिया, न्यू देहली) वाल्यूम 3(1), मई, 1996, पीपी 28-36.

7. "इंस्टीट्यूशनल डेवलपमेंट एण्ड ऑर्गेनाइजेशनल स्ट्रेंथनिंग", एमडीएफ कॉन्फ्रेंस पेपर्स (सेप्टेम्बर 12-30, 1994).

8. "कैपेसिटी बिल्डिंग", कम्यूनिटी डेवलेपमेंट रिसोर्स एसोसियेशन एनुअल रिपोर्ट 1994-95 (वुडस्टॉक, साउथ अफ्रीका) पी. 2-21.

9. इयान स्माइल, "दि आल्मस बाजार, आलटूइज्म अण्डर फायर-नॉन - प्रॉफिट ऑर्गेनाइजेशन एण्ड इण्टरनेशनल डेवलपमेंट", (आई.टी. पब्लिकेशन्स, लण्डन 1995)।

10. फ्रैंक फ्रीडलाउडेर एण्ड एल.डेव ब्राउन, "ऑर्गेनाइजेशन डेवलपमेंट", इन वैन्डेल एल.फ्रेंच, सेसिल एच. बेल एण्ड रॉबर्ट ए-जाक्सकी (एड.), ऑर्गेनाइजेशन डेवलपमेंट, थियरी, प्रैक्टिस एण्ड रिसर्च (बी.पी.आई. - इरविन, इलिनॉय), 1989, पी. 41-57.

11. नॉर्मन अपहॉफ, "लोकल इण्टरनेशनल डेवलपमेंट, एन एनालिटिकल सोर्स बुक विथ केसेज", (कुमैरियन प्रेस, कनेक्टिकट, 1986).

12. शरमैन ग्रिनेल, "ऑर्गेनाइजेशनल डेपलपमेंट - एन. इन्ट्रोडक्ट्री ओवरव्यू", दि बिजनेस क्वारटरली, विन्टेर, 1969, पेजेज 24-31.

13. (ए) ऐल्फ पी. लिन्टन एण्ड उदय पारेख, "ट्रेनिंग फार डेवलपमेंट", (कुमारियन प्रेस कनेक्टीफट, 1990).

13. (बी) रॉल्फ पी लिन्टन एण्ड उदय पारेख, "फैसीलिटेशन डेवलपमेंट", (सेज पब्लिकेशन्स, देहली, 1992).

14. एल.डेव ब्राउन, "प्लैन्ड चेन्ज इन अण्डर ऑर्गेनाइण्ड सिस्टम्स", इन टी.जी. कमिंग्स (एड.), सिस्टम्स थियरी फॉर ऑर्गेनाइजेशन डेवलपमेंट (जॉन वीले एण्ड सन्स लि0, 1980 पेजेज, 181-203.

15. (ए) रेन्सिस लिकेर्ट एण्ड जेन ग्रिबसन लिकेर्ट, "न्यू वेज ऑफ मैनेजिंग कनफ्लिक्ट" (मैक-ग्रा-हिल, 1976) पेंजेज 269-286.

(बी) बारबरा ग्रे ग्रिकार एण्ड एल डेव ब्राउन, "कनलिक्ट, पॉवर, एण्ड ऑर्गेनाइजेशन्स एन ए चेन्जिंग कम्यूनिटी", ह्यूमन रेलेशन्स (टावस्टाक इन्स्टीट्यूट ऑफ ह्यूमन रेलेशन्स) वाल्यूम 34(10) 1981, पेजेज 877-893.

8179
24.2.98
LIBR
Society for Participato...

प्रिया

सोसायटी फॉर पार्टिसिपेटरी रिसर्च इन एशिया (प्रिया) एक स्वतंत्र, गैर-लाभकारी स्वैच्छिक संगठन है जिसका 1982 में सोसायटी रजिस्ट्रेशन एक्ट 1860 के अंतर्गत पंजीकरण हुआ है। यह संगठन नई दिल्ली, भारत में स्थित है।

पिछले 12 वर्षों के अंतर्गत प्रिया ने सहभागी अनुसंधान के दायरे में लोक-निहित प्रारम्भिक विकास को बढ़ावा दिया है। लोक-ज्ञान को मजबूत करना, महत्वपूर्ण तथ्यों को सरल ढंग से समझाना और अनुभवसिद्ध (एक्सपीरियंशल) ज्ञान को बढ़ावा देना, इन सभी कार्यों की सहायता से प्रिया गरीब व शोषित लोगों को उनके अधिकार देने में सफल रहा। स्थानीय अध्ययनों, प्रलेखनों, कार्यशालाओं और प्रशिक्षण कार्यक्रमों, नेटवर्किंग और आन्तरिक संबंधों को बढ़ावा देने की मदद से प्रिया ने स्थानीय संगठनों, स्वैच्छिक संस्थाओं और गैर-सरकारी संगठनों को शक्ति प्रदान की।

प्रिया के महत्वपूर्ण मिशन हैं :

- लोक संगठनों व स्वैच्छिक संस्थाओं तथा नागर समाज के अन्य घटकों के लिए सीखने-समझने के शैक्षणिक अवसर उत्पन्न करना।
- समाज की प्रवृत्तियों व विकास की नीतियों और कार्यक्रमों का खरा और रचनात्मक विश्लेषण करना।
- विभिन्न दृष्टिकोणों, क्षेत्रों व संस्थाओं के बीच संवाद नियोजन करना।

सोसायटी फॉर पार्टिसिपेटरी रिसर्च इन एशिया (प्रिया)
42, तुगलकाबाद इंस्टीट्यूशनल एरिया
नई दिल्ली - 110 062.
दूरभाष : 698-1908, 698-9559; फैक्स : (011)-6980183
E-mail : pria@sdalt.ernet.in

सहभागी शिक्षण केन्द्र

सहभागी शिक्षण केन्द्र सोसायटी रजिस्ट्रेशन एक्ट, 1860 के अन्तर्गत एक पंजीकृत संस्थान है। यह संस्थान मुख्यतः उत्तर प्रदेश में कार्यरत है। सामाजिक परिवर्तन के कार्यक्रमों में ग्राम्य स्तर पर कार्यरत स्वैच्छिक संस्थाओं/संगठनों को आवश्यक शैक्षणिक सहयोग प्रदान करना इस संस्थान का प्रमुख कार्य है। इसके लिए यह संस्थान मुख्यतः उन संस्थाओं/संगठनों की क्षमतावृद्धि कार्यक्रम को क्रियान्वित कर रहा है। क्षमतावृद्धि प्रशिक्षण कार्यक्रमों के अलावा केन्द्र संस्थाओं की प्रक्रिया दस्तावेजीकरण एवं विकास के विभिन्न मुद्दों पर सहभागी अनुसंधान एवं सहभागी मूल्यांकन कार्यक्रम का भी क्रियान्वयन करता है।

इस उद्देश्य के अन्तर्गत इस केन्द्र द्वारा ग्राम्य स्तर पर कार्यरत संस्थाओं/संगठनों के मुख्य कार्यकारी, मध्य स्तर के कार्यकर्ता एवं क्षेत्र स्तर के कार्यकर्ताओं के लिए विभिन्न प्रकार के प्रशिक्षण कार्यक्रमों का संचालन करती है। प्रशिक्षकों का प्रशिक्षण, संस्था प्रबंधन, कार्यक्रम नियोजन, परियोजना प्रस्ताव लेखन, लेखांकन एवं वित्तीय प्रबंध, फिल्ड वर्कर प्रशिक्षण, माइक्रोप्लानिंग प्रशिक्षण, कार्यकर्ता विकास प्रशिक्षण, जेंडर सेन्सटाईजेशन प्रशिक्षण, महिला कार्यकर्ताओं के लिए नेतृत्व विकास प्रशिक्षण, प्रक्रिया दस्तावेजीकरण पर प्रशिक्षण, विभिन्न सरकारी नियम-कानून पर प्रशिक्षण एवं कार्यशालाओं का आयोजन किया जाता है। पंचायती राज के संदर्भ में प्रशिक्षको का प्रशिक्षण का आयोजन भी इस केन्द्र द्वारा किया जाता है। प्रशिक्षण एवं शोध के साथ-साथ केन्द्र अनेक विषयों पर प्रशिक्षण सामग्री, मैनुअल, पत्र-पत्रिकाएं इत्यादि सामग्रियों का विकास एवं वितरण का कार्य करती है। इस तरह विकास के मुद्दों पर स्वैच्छिक संगठनों को जानकारी प्रदान करना इस केन्द्र का अत्यन्त महत्वपूर्ण कार्य है।

सहभागी शिक्षण केन्द्र

4/487, विवेक खण्ड, गोमती नगर, लखनऊ - 226 010 (उ. प्र.)

फोन : 0091-522-393559 फैक्स : 0091-522-397491

E-mail : ssk.lko@smy.sprintrpg.ems.vsnl.net.in